अस्सी तोला सोना

एवं

अन्य अभिनेय मौलिक व्यंग्य एकांकी

ईश्वर शर्मन

आशा प्रकाशन गृह
करौलबाग, नई दिल्ली-५

समर्पण

रंगमंच के मंजे हुए कलाकार
ज्येष्ठ भ्राता स्वर्गीय श्री नारायण भारती को
जो मुझे निःसहाय छोड़कर
अकस्मात् स्वर्ग सिधार गए।

आमुख

मेरे जीवन मे इतने उतार-चढ़ाव आए है कि मेरा जीवन और नाटक एक रूप हो गए है। मैं ही नही समस्त विश्व ही नाटकमय है। मनुष्य जन्म से ही नाटक खेलता है। बचपन में अपने माता-पिता से प्राप्त संस्कारों को जीवन में उतारने के लिए गुड़िया और गुड्डे को प्रतीक मानकर नाटक खेलता है, और बड़ा होकर जीवन की जटिलताओं से जूझता हुआ सासारिक मंच पर अपनी भूमिका निभाता है। नाटक के बिना सारा ससार गतिहीन है, शून्य है। तभी तो भरत मुनि ने चार वेदों से क्रमशः वस्तु, सवाद, संगीत और अभिनय लेकर इसकी सृष्टि की थी और इसे पंचम वेद की संज्ञा दी थी। यह पंचम वेद सत्य है, शिव है और सुन्दर है।

जीवन की किसी घटना को दूसरों के सन्मुख यथार्थ रूप से प्रस्तुत करने का सहज माध्यम नाटक ही है। अर्थात् इसमें अभिनय पक्ष प्रबल होता है। अभिनय का आधार संवाद है और संवाद का आधार है साधारण बोल-चाल। सरलता, भावुकता एवं तर्क किसी अच्छे संवाद के गुण हैं।

नाटक न कोरी कल्पना है और न ही केवल यथार्थ। इन दोनों का सामंजस्य ही नाटक है। यथार्थ उसे सत्य रूप देता है और कल्पना उसे देती है सौंदर्य।

नाटक कई प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है। उसके मुख्य माध्यम हैं नाटक, संगीत नाटक और नृत्य नाटक। प्रथम में संवादों को अभिव्यक्ति गद्य द्वारा, द्वितीय में अभिव्यक्ति गीतों द्वारा और तृतीय में अभिव्यक्ति नृत्य की मुद्राओं द्वारा होती है। नाटक जीवन की किसी भी स्थिति को

व्यक्त करने में समर्थ है।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मेरा जीवन और नाटक एक-दूसरे के पूरक हैं। मेरा जन्म संयोगवश एक ऐसे परिवार में हुआ जहाँ नाटक, परिवार के वातावरण पर छाया हुआ था। नाटकीय तत्त्व मुझे घुट्टी में मिले थे। इसलिए नाटक के अंकुर मुझमे प्रस्फुटित होने स्वाभाविक थे। मेरे दादा जी श्रद्धेय पं० ठाकुरदत्त जी भारद्वाज एक अच्छे नाटककार और मँजे हुए निर्देशक थे। मेरे नानाजी श्रद्धेय पं० चांदालाल जी 'चंद्र' तत्कालीन नाटककारों मे अपना स्थान रखते थे। उनका लिखा 'महाभारत नाटक' उस समय की उत्कृष्ट रचना थी जिसे मेरे दादाजी ने रंगमंच पर प्रस्तुत करके चार चाँद लगा दिए थे। मेरे चाचाजी पूज्य पं० लोकनाथ जी अपने जमाने के ख्यातिप्राप्त निर्देशक थे और प्रभावशाली अभिनेता थे। मेरे चचेरे ज्येष्ठ भ्राता पूज्य पं० जीवनलाल जी जो अपने प्रशसको मे 'ज्यूलाल' के नाम से प्रसिद्ध थे, एक सफल मंच-सचालक थे। मुल्तान नगर मे यही सब रगमच के जन्मदाता थे। मेरे मातुल श्री पूज्य पं० दुर्गादत्त जी गौतम भी कुशल मंच-संचालक थे। देश के बँटवारे के बाद लुधियाना मे उन्होंने 'भारत विजय थियेटर्ज' के नाम से एक व्यावसायिक मंच की स्थापना की थी जिसमें कुछ नाटको की रचना करने एवं निर्देशन करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरे ज्येष्ठ भ्राता पूज्य पं० नारायण भारती जी जो सदा मेरे लिए प्रेरणा के स्रोत रहे हैं और जिनके आकस्मिक निधन से मुझे गहरा आघात पहुँचा है, एक सफल मंच अभिनेता था। स्पष्ट है कि नाटकों के प्रति मेरी चिन्ता एव श्रद्धा स्वाभाविक है।

आज का मानव अपनी परिस्थितियों में इतना जकड़ा गया कि वह मनोरंजन नाम की किसी भी वस्तु को भूल गया। अपने जीवन-निर्वाह के लिए नोन, तेल जुटाने में उसे इतना व्यस्त रहना पड़ा कि मनोरजन के लिए कुछ क्षण निकाल पाना उसके लिए कठिन हो गया। तभी बड़े नाटको का स्थान छोटे नाटकों ने ले लिया।

मैंने भी समय की गति देखते हुए कुछ एकांकी नाटकों की रचना की।

सामाजिक घटनाचक्र का व्यंग्यात्मक दिग्दर्शन कराने का इनमें प्रयास किया गया है। मेरे नाटकों के कथानक काल्पनिक नहीं है, पर पूरे यथार्थ भी नहीं। ये कल्पना और यथार्थ के सम्मिश्रण है। इनके संवाद सरल, स्वाभाविक और स्थिति के अनुकूल है। इनके पात्र कल्पित होकर भी कल्पित नहीं है। यदि किसी भी पात्र की समानता किसी भी व्यक्ति से मिले तो वे किसी भ्रम में न पड़कर जान लें कि उनको लक्ष्य करके कुछ नहीं लिखा गया है।

नाटक आपके सम्मुख प्रस्तुत है। इनके सच्चे समालोचक आप ही हो सकते है। मैं केवल इतना कहूँगा कि मेरे नाटक अभिनेय हैं और अभिनीत हो भी चुके है।

यदि किसी भी नाट्य संस्था द्वारा मेरे किसी भी नाटक का अभिनय किया गया तो मैं अपनी साधना को सार्थक मानूंगा।

७५६, सुईवालान,
दिल्ली।

ईश्वर शर्मन

एकांकी-क्रम

- अस्सी तोला सोना ... १
- तेरा-मेरा ... ३३
- कथानक की खोज ... ७३
- शायद वे आए हैं ... ६३
- स्वास्थ्य का रक्षक ... १२१

पात्र

शंकर—नवविवाहित युवक (आयु २५ वर्ष)

राधेश्याम—शंकर का पिता (आयु ५० के लगभग)

छोटू—शंकर का छोटा भाई (आयु १५ वर्ष)

बूआ—शंकर की विधवा बूआ (आयु ५५ वर्ष)

गौरी—शंकर की नवपरिणीता (आयु २० वर्ष)

बुढ़िया—शंकर की दूर की रिश्तेदार (आयु ५५ वर्ष)

दो लड़कियाँ—बुढ़िया की पोतियाँ (आयु १८ और १६ वर्ष)

[एक अच्छा साफ-सुथरा कमरा। दीवारों पर नई सफेदी। चार बड़े-बड़े चित्र टँगे हैं। बायी ओरकी दीवार में एकदरवाजा अंदर को खुलता है और दायी ओर की दीवार में एक दूसरा दरवाजा बाहर को खुलता है। सामने एक नया-सा पलँग पड़ा है, जिस पर नया बिछौना बिछा हुआ है। बायी ओर पलंग के सिरहाने एक मेज पड़ी है, जिस पर एक घड़ी (टाईमपीस), एक फूलदान और एक फोटो-फ्रेम रखा हुआ है जिसमें शंकर की फोटो जडी है। दायी ओर के कोने में एक नई सिंगारमेज पडी है जिस पर सिंगार का सामान और कुछ जूड़े की सूइयाँ पड़ी हैं। उसी दीवार के साथ एक अलमारी है और दीवार मे लकड़ी की खूँटियाँ है जिन पर कुछ नये कपड़े टँगे है। बीच में एक गोल मेज है, जिस पर बढ़िया टेबलक्लाथ बिछा है और ऊपर नये ढंग की ऐशट्रे रखी है।

पर्दा उठता है तो सारा दृश्य दिखाई देता है। सामने के पलँग पर गौरी, इस घर की बहू, जिसका ब्याह अभी-अभी हुआ है—सो रही है। रजाई से उसका शरीर ढका है। दायी ओर के द्वार से चुपके से शंकर प्रवेश करता है। उसके हाथ मे एक लिफाफा है जिसमे शायद अगूर हैं। शंकर २५ वर्ष का सुन्दर युवक है। गौर वर्ण, लम्बा शरीर और घुंघराले बाल। शरीर पर नाइट-सूट पहने है। धीरे से गौरी के पलँग की ओर बढ़ता है और उसकी रजाई हटा देता है। उसे हाथ लगाता है, तो वह हड़बड़ाकर उठ बैठती है। गौरी गौर वर्ण, इकहरे शरीर और सुन्दर आकृति की लड़की है। शरीर पर गुलाबी रंग की साटन का सूट और साधारण आभूषण हैं।]

गौरी : (आँखें मलते हुए) आपने तो मुझे डरा ही दिया।

शंकर : शी ! धीरे बोलो'''बूआजी सुन लेंगी।

गौरी : आपकी बूआ ने तो नाक में दम कर रखा है।

शंकर : शी ! ···खा···मो · श ··यदि बूआजी सुन पाएँगी तो प्रलय हो जाएगी। वह इस घर की हिटलर हैं।

गौरी · मैं तो इन दो दिनों में ही तंग आ गई हूँ।

शंकर : शी ! '''ऐसी बातें मत करो ! पिताजी भी बूआजी से थर-थर कांपते हैं। तुम्हें भी उनकी आज्ञा का पालन करना होगा।

गौरी : मुझसे नहीं होता। मैं जो···

शंकर : जरा, धीरे बोलो, वह रसोई में हैं।

गौरी : चाहे कहीं हों·· मैं।

शंकर : (धीरे से) ओहो···अच्छा छोड़ो इन बातों को। मैं जो कहने आया हूँ, सुनो !

गौरी : (कुढ़कर) कहो।

शंकर : यह देखो।

लिफाफा दिखाता है।

गौरी : क्या है ?

शंकर : अंगूर हैं ! रात को तुम्हारे लिए लाया था। पर बूआजी के डर से तुम्हारे तक न आ सका। अब अवसर पाकर आया हूँ। यह लो खाओ।···

एक-दो अपने मुंह में डालता है।

गौरी : मैं नहीं खाऊँगी···मैं यहाँ पर तंग आ गई हूँ। जेल-खाने में भी इतना कड़ा पहरा नहीं सुना, जितना यहाँ है। मैं यहाँ नहीं रहूँगी। मुझे आज रात ही

भेज दो !

शंकर : ये तो बाद की बातें हैं। पहले यह तो खाओ !

गौरी : मुझे इच्छा नहीं है।

शंकर : ओहो···अच्छा भई ! जैसी तुम्हारी इच्छा हो करना। लो, अब तो खाओ।

गौरी : मैं इस घर में नहीं रहूँगी।

शंकर : अच्छा-अच्छा···यह तो खाओ।

दो अंगूर निकालकर उसके मुंह मे देता है और स्वयं भी खाता है।

आवाज़ : शंकर··· शंकर···

शंकर : ओ ! (घबराकर) बूआजी !

मुंह के अंगूर मुंह में ही रह जाते हैं।

गौरी : खाओ न !

शंकर : बूआजी !

गौरी : तो क्या हो गया ?

शंकर : मुझे यहाँ देख लेंगी तो नाराज़ होंगी।

गौरी : कोई चोरी थोड़े कर रहे हो। खाओ, खाओ।

शंकर मुंह के अंगूर चबाने लगता है।

आवाज : शंकर ! ···शंकर !

शंकर : (घबराकर) मैं जाता हूँ।···तुम भी सो जाओ।

आवाज : शंकर···

आवाज़ समीप आती है।

शंकर : (घबराकर) आ गई—जल्दी करो सो जाओ ! सो जाओ ना !

उसे जबरदस्ती सुलाता है।

गौरी : ओहो, क्या आफत है !

लेट जाती है। शंकर ऊपर रजाई डाल देता है।

शंकर : बूआजी को कुछ मत कहना।

बायीं ओर के दरवाजे से निकल जाता है।

बूआ : शंकर·· मैं·· (प्रवेश) शंकर !···कहाँ चला गया सवेरे-सवेरे ?···हूँ, बहू अभी तक भी सो रही है ! वाह ! कैसा समाँ आया है ! हमारा भी तो जमाना था। पहले दिनों में ससुराल में सोती तक न थीं। और यह खर्राटे ले रही है। बहू···ओ ! बहू।···

जगाती है।

गौरी : हूँ।

बूआ : छी ! बेहोशी की नींद अच्छी नहीं। कुछ सँभाल चाहिए। हमारा भी तो जमाना था। क्या मजाल जो बेवक्त आँख लग जाए। उठो, मुँह-हाथ धो लो।

गौरी शरमाकर उठ बैठती है और बूआ के पाँव छूती है। फिर बैठ जाती है।

: सुहागन हो। उठो, बहुत दिन चढ़ आया है। मुँह-हाथ धो लो। कोई मिलने को ही आ जाता है। (सहसा लिफाफा देखकर, उठाकर, उसमें झाँक कर) अंगूर ?···यह कौन लाया है ?·· यह अंगूर कौन लाया है ?·· शंकर·· शंकर ?

शंकर : (बायीं ओर के कमरे से निकलकर) जी।

बूआ : अच्छा तो राजा जी यहाँ छिपे हुए हैं ? आज ही ब्याह हुआ और आज ही बहू की बगल में छिपने लगा। आए हाए ! कैसा समां है ! हमारा भी तो जमाना था। बीस-बीस दिन बहू की सूरत तक नहीं देखते थे।…तुम यहाँ क्या करने आए थे ?

शंकर चुप रहता है।

· ये अंगूर कौन लाया है ?

शंकर : (धीरे से) मैं लाया हूँ।

बूआ : काहे को ?

शंकर चुप रहता है।

: भला अंगूर रखने की यह जगह है ? कहीं जाली में रखते। अलमारी में रखते। भला अंगूर लाने की क्या पड़ी थी ! यदि लाए थे तो यहाँ रखने से क्या, बच्चों में बाँट देते। किसी बात की समझ नहीं। छोटू…छोटू…

छोटू : (आकर) कहो बूआजी।

बूआ : यह लो बेटा ! शंकर तुम्हारे लिए अंगूर लाया है। लो खाओ।

दो-चार अपने मुँह में भी डालती है। शंकर और गौरी एक-दूसरे को देखते है।

: (छोटू से) यह ले, बाकी शीला को दे दे।

लिफाफा छोटू को देती है। छोटू लेकर भाग जाता है।

: (शंकर से) चलो, आकर कुछ साग-सब्जी का डौल

करो। दिन बहुत चढ़ गया है।

शंकर : अभी आता हूँ।

बूआ : अभी आता हूँ का क्या मतलब? चलो, वह तुम भी उधर चलो। मुँह-हाथ धो लो।

गौरी : अभी आती हूँ।

बूआ : अभी आती हूँ?...आए हाए, कैसा समाँ आया है!...हमारा भी तो जमाना था। माँ-बाप के इशारे पर नाचते थे। जल्दी चलो!

शंकर चलने लगता है।

गौरी : मुझे ज़रा कपड़े निकालने हैं।

बूआ : कपड़े? क्यों? इन कपड़ों को क्या हुआ है? कल शाम ही को तो पहने थे। रात ही में जोड़ा खत्म। वाह! कैसा समाँ आया है! हमारा भी तो जमाना था कि...

गौरी : मिलने वाले जो आएँगे।

बूआ : मिलने वाले आएँगे, कोई आफत तो नहीं आएगी! अभी ठीक है जो कुछ भी है। शाम को बदल लेना।

गौरी : यह तो रात का जोड़ा है।

बूआ : वाह रे जमाना! फिर तो एक दिन के लिए आठ जोड़े चाहिए। एक नहाने का जोड़ा, एक खाने का जोड़ा, एक सोने का, एक उठने का, एक बैठने का...राम...राम...राम...।...जमाने को तो पर लग गए हैं। कैसा समाँ है! हमारा भी तो जमाना था। आठ-आठ दिन एक जोड़ा चलता था।

गौरी शंकर की ओर देखती है। शंकर चुप रहने का इशारा करता है।

गौरी : (क्रोध पीकर) जैसा कहें।

बूआ : हाँ-हाँ ठीक है। अभी जाकर मुंह-हाथ धो लो। मैं जरा इधर कमरा ठीक कर लूं। (गौरी जाती है) और शंकर, यह लो पैसे (पल्ले से खोलकर देती है) तू जाकर सब्जी ले आ।

शंकर : क्या लाऊँ ?

बूआ : क्या लाएगा ? सब्जी को तो आग लगी है। इतनी महँगी हो गई है कि हाथ नहीं लगाने देते। मेरा विचार है काशीफल ले आ। वह सस्ता है। दो आने सेर होगा। दो सेर काफी है।

शंकर : बस एक ही ?

बूआ : एक नहीं तो क्या दस सब्जियाँ बनेंगी ? हे राम ! कैसा समाँ है ! हमारा भी तो जमाना था। सारा-सारा महीना केवल दाल ही खाते थे।…जा जा… जैसा मैं कहती हूँ वैसा कर…।

शंकर धीरे से जाता है। बूआ कमरे को देखती है और धीरे-धीरे समान ठीक व सफाई करती है। राधेश्याम का प्रवेश। हृष्ट-पुष्ट शरीर, छोटी मूछें। कुर्ता और धोती पहने है। माथे पर चन्दन का तिलक है।

राधेश्याम : भाई मेरी टोपी नहीं मिल रही।

बूआ : हाँ इधर है (ढूँढ़कर साफ करके देती है) यह लो।

राधेश्याम : यह इधर कैसे आ गई ?

बूआ : शीला ही लाई होगी ।

राधेश्याम : बस यही इसमें बुरी आदत है। चीज सँभालकर नहीं रखेगी ।

बूआ : इसे किसकी परवाह है ? इतना होश नहीं है कि मेरे बाप की टोपी है, मै जरा सँभालकर रखूं। पता नहीं कैसा समां है ! हमारा भी तो जमाना था । बड़ों की टोपी-पगड़ी चूमकर माथे से लगाते थे ।

राधेश्याम : (टोपी पहनते हुए इधर-उधर देखकर) बहू कहाँ गई है ?

बूआ : उधर ही तो है ।

राधेश्याम : हाँ, आई तो थी । फिर पता नहीं कहाँ चली गई ?

बूआ : चली गई ? हाय-हाय कैसा समां है ! हमारा भी तो जमाना था । सास-ससुर से पूछे बिना कदम नहीं रखती थी ।

राधेश्याम : मेरा विचार है, गुसलखाने में जा रही थी । शायद स्नान करने गई हो ।

बूआ : अरे हाँ, मैंने हीतो उसे मुंह-हाथ धोने को भेजा था । (दायीं ओर के दरवाजे से झांककर) हाँ वहीं है । दरवाजा बन्द है ।

राधेश्याम : (दबी आवाज में) सुनो, बहू आज शायद मायके फेरे के लिए जाएगी ।

बूआ : हाँ ! जाएगी !

राधेश्याम : गहने भी सब साथ ले जाएगी !

बूआ : क्यों ?

राधेश्याम : पहली बार जो जा रही है।

बूआ : क्या हुआ फिर ?

राधेश्याम : माँगने वाले माँग रहे है। हमने तो केवल वरी में दिखाने के लिए ही तो लिए थे।

बूआ : (दबी आवाज में) लिए तो क्या हुआ, सभी लेते हैं।

राधेश्याम : परन्तु वापस भी तो शीघ्र करने पड़ते है। जोखिम की चीज है।

बूआ : तुम चिन्ता मत करो। मैंने सब उतरवाकर रख छोड़े हैं। एकदम वापस करना ठीक नहीं। वह जब आज चली जाएगी तो कल वापस कर देंगे।

राधेश्याम : वापस कैसे कर देंगे ? वह लेकर नहीं जाएगी ?

बूआ : तुम चुप कर रहो ! सारा ले जाकर कोई नुमाइश खोलनी है ? वह ले जाएगी कोई दस-बारह तोले। बस।

राधेश्याम : लेकिन यह तो हमारी बदनामी होगी।

बूआ : अब क्या बदनामी ? नामी-बदनामी तो सब वरी के समय पर ही होती है। इसीलिए तो मैंने वहाँ पर पूरी चोट दी है। चालीस तोले से चालीस तोला ही मिलाया है। देखने वाले सब दंग थे।

गर्व से आँखें चमकाती है।

राधेश्याम : परन्तु अब यदि भेद खुल गया तो ?

बूआ : क्या खुल गया ? तीस तोला सोना तो हमारा अपना ही है ? बाकी दस तोले को हो तो बात है न, तो क्या हुआ ?

राधेश्याम : लेकिन इसमें भी तो दस तोला इन्द्रा का है । अपना तो केवल बीस तोला ही है ।

बूआ : बीस तोला है तो क्या हुआ । हमारा भी तो जमाना था । सारी वरी माँग-मूँगकर दिखाते थे । तुम्हें तो सब पता है ।

राधेश्याम : परन्तु अब तो ज़माना बहुत बदल गया है जीजी ! आज की लड़कियाँ सीधी-सादी नहीं हैं । यदि यह भेद बहू पर खुल गया, तो अवश्य मायके जाकर कह देगी !

बूआ : आए हाए ! तुम बड़े भोले हो । भेद खुल कैसे सकता है ? बहू क्या हर समय अस्सी तोला सोना शरीर पर लादती फिरेगी ?

राधेश्याम : व्याह-उत्सव में तो लादना ही पड़ता है । और यदि वह कभी सारे गहने सँभाले तब ?

बूआ : कैसे सँभाले ? रहेंगे तो मेरे ही कब्जे में । व्याह-उत्सव के लिए भी तो मैं ही उसे दूँगी । चालीस-पचास से अधिक क्या पहनेगी !

राधेश्याम : अच्छा, दूर की छोड़ो । आज की क्या सोची है ?

बूआ : सोचनी क्या है ? यदि तुम कहते हो तो फेरे के लिए मैं उसे चालीस तोले ही दूँगी । बीस उसके दहेज के और बीस हमारे ।...हाँ, यदि उसने अधिक

हठ किया तो दस तोले और दे दूंगी बस। मैं सब ठीक कर लूंगी। तुम चिन्ता मत करो।

राधेश्याम : अच्छा जैसे तुम ठीक समझो।...यदि उसे सारे गहने नहीं देने है तो लाओ, माँगे हुए अभी ही वापस कर दूं। जोखिम अपने पास रखने से क्या लाभ ?

बूआ : लाऊँ कहाँ से ? अभी तो सारा गहना बहू के पास है, वापस कहाँ लिया है ? आज अभी लूंगी। तुम कल दे देना।

राधेश्याम : तुम तो कहती थीं कि उतरवाकर मैंने रख लिया है !

बूआ : हाँ, उतरवाकर रख लिया है। लेकिन है उसीके पास ही।

राधेश्याम : अच्छा कल ही सही।

बूआ : (दायें दरवाजे से झाँककर) बहू बाहर आ गई है।

राधेश्याम : (तनिक खुले स्वर में) अच्छा भई, मैं चलता हूँ। मुझे दुकान की देर हो रही है।

बूआ : अच्छा (फिर दबे स्वर में) तुम कुछ चिन्ता मत करो। मैं सँभाल लूंगी।

राधेश्याम का टोपी सँभालते हुए प्रस्थान। गौरी का प्रवेश।

: धो आई मुँह-हाथ ?

गौरी : जी।

बूआ : एह ! अब देखा, रूप कैसा निखर रहा है? रोज ही

उठकर सवेरे-सवेरे ऐसा कर लिया करो। मेरे कहने की आवश्यकता न पड़े। आज का समय तो आलस से भरा है। हमारा भी तो जमाना था। बहुएँ हर समय चमचम चमकती थीं।...नहा आई हो या मुँह-हाथ धोया ?

गौरी : अभी तो मुँह-हाथ ही धोया है।

बूआ : गुसलखाने में तो गई थी, नहा ही लेती ! नौ बजने को हैं, क्या मुँह-हाथ धोने का समय है ! नहाना क्या बारह बजे होगा ! पता नहीं कैसा समाँ है ! हमारा भी तो जमाना था। बहुएँ प्रातः चार बजे उठकर नहा लेती थीं।

गौरी : आप ही ने तो कहा था, कि जाकर मुँह-हाथ धो लो।

बूआ : आए हाए ! भई, कुछ बातें अपने आप भी तो सोचनी पड़ती हैं। पता नहीं कैसा समाँ है ! हमारा भी तो जमाना था, अपने-आप सोच-समझकर सब कुछ कर-करा लेती थीं।

गौरी चुप रहती है।

: अच्छा ...शंकर सब्जी लेकर आया कि नहीं ?

गौरी : आ गए होंगे !

बूआ : अच्छा तू उधर जा। वह साग-सब्जी ले आया होगा, तू जाकर छील-छाल दे। और शीला से कहना चूल्हे पर धर देगी। मैं जरा इधर का काम निपटा लूँ।

गौरी : शीला तो उधर नहीं है।

बूआ : कहाँ गई है ? इस छोरी का कहीं ठिकाना नहीं।

हमारा भी तो जमाना था। कँवारी छोरियाँ घर से बाहर झांकती तक नहीं थीं। अच्छा। तू जा साग-सब्जी छील, मैं आती हूँ। जा…

गौरी का प्रस्थान। बूआ लम्बी साँस लेकर चारपाई पर बैठती है।

शीला की आवाज : बूआजी !

बूआ चौंकती है। बाहर से तीन स्त्रियों के साथ शीला का प्रवेश। एक अधेड़ उम्र की है और दो बड़ी लड़कियाँ है। हाथ मे मिठाई की टोकरी है।

बूआ : आइए जी।…आइए। बैठिए।

स्त्री : थक गई आपका घर ढूंढ़ते-ढूंढते ! सोचा था बहू को मिल ही आऊँ !

सोफे पर बैठती है।

बूआ : बहुत अच्छा किया ! हाँ, नई जगह ढूंढ़ने में ऐसा ही होता है। शंकर का ब्याह होने पर वहाँ गुजारा कठिन था, इसलिए यह लेना ही पड़ा।

स्त्री : हाँ यह ठीक है। (कमरे को देखती है) यह तो शीला बाहर मिल गई तो हमें ले आई।

बूआ : इसीलिए तो इसे बाहर खड़ा रखती हूँ। नया मकान ढूंढ़ने में जरा कठिनाई होती है। सोचा, यह बाहर खड़ी रहे, तो सबको लाती रहेगी। आजकल सबने आना जो हुआ !

स्त्री : हाँ जी ! …बहू कहाँ है ?

बूआ : उधर है।

शीला : मैं लाती हूँ।

दूसरे कमरे मे भागती है।

बूआ : अरी सुन (आगे जाकर धीरे से कहना) उसे कहना जरा हाथ धोकर आए, और यदि कोई साड़ी-वाड़ी हो तो वही पहनकर आए।

आकर चारपाई पर बैठती है।

स्त्री : वहू उधर क्या कर रही है?

बूआ : ऐसे ही, आज फेरे के लिए जा रही है न, सो तैयारी कर रही होगी।

स्त्री : हाँ जी! आज की लड़कियों की तैयारी भी बड़ी भारी होती है।

बूआ : हाँ जी, वस कुछ न पूछिए। आज का समाँ बड़ा बेढंगा है। हमारा भी तो जमाना था। पलक झप-काते ही तैयार हो जाती थीं।

शीला के साथ गौरी का उसी साड़ी मे प्रवेश। सब आपस में हाथ जोड़ती है! गौरी बूआ के पास चारपाई पर बैठती है।

स्त्री : आओ, मेरे पास आ जाओ।

गौरी को अपने पास बिठाती है और मिठाई की टोकरी देती है।

बूआ : ओहो! आप यह क्या लाई हैं?

स्त्री : बहूको खाली हाथ थोड़े ही मिलने आती। यहलो।

गौरी शरमाकर बैठी रहती है।

स्त्री : बड़ी शरमीली लड़की है। मिठाई भी नहीं लेती।

बूआ : (हँसकर) आज का समाँ है ही ऐसा ! हमारा भी तो जमाना था। बड़ों की दी हुई चीज आदर-सत्कार से ले लेती थीं।

गौरी शरमाकर ले लेती है।

एक लड़की : शंकर भैया कहाँ हैं?

शीला : उनकी याद कैसे आई ?

एक : देख रही हूँ, भाभीजी उदास हैं।

शीला : भैया तो ज़रा बाजार गए हैं।

एक : इनको भी साथ ले जाते न।

स्त्री : इसीलिए तो आज कपड़े नहीं बदले।

बूआ : क्या करूँ ! सौ बार कहा है कपड़े बदल लो, कपड़े बदल लो। कहती है यही ठीक हैं। समाँ ही अजीब है ! हमारा भी तो जमाना था। नई बहुएँ एक दिन में आठ-आठ जोड़े बदलती थीं।

स्त्री : ऐसा ही होता है शुरू-शुरू में। बच्ची जो हुई, बाद में सब समझ जाएगी।

एक : खाती भी तो कुछ न होगी।

बूआ : क्या पूछती हो ! मिठाइयाँ मँगाईं, दूध के गिलास आए। चाय-बिस्कुट मँगाए। मुँह तक नहीं लगाती। ऐसी भी क्या शरम है ? हमारा भी तो जमाना था। जो कुछ भी आता, खा ही लेती थीं।

स्त्री : कोई बात नहीं, नये दिनों में शर्म आती ही है।

दूसरी : (गौरी की बाँह पकड़कर) कितनी चूड़ियाँ

पहनी हैं ?

बूआ : वे मैंने खुद ही उतरवाकर रख छोड़ी हैं। भई समाँ बड़ा भयानक है ! सोना तो जान का शत्रु हो रहा है। हमारा भी तो जमाना था। बहुएँ सोने से लदी फिरती थीं। कोई भी आँख उठाकर नहीं देखता था। क्यों ?

अधेड़ स्त्री की ओर देखती है।

स्त्री : हाँ जी !

बूआ : और फिर भैया भी नाराज होते हैं। नहीं तो चालीस तोले सोना पहनाया है। आपको तो पता ही है। वरी में देखा ही होगा !

स्त्री : हाँ जी। बहुत बढ़िया वरी थी आपकी।

बूआ : एह !

निस्तब्धता

: अरी शीला, तू तो यहाँ बैठ गई है। तू इनके पानी-वानी का तो प्रबन्ध कर। अपने-आप तो तुम्हें कुछ समझ नहीं। हमारा भी तो जमाना था कि घर आए को पहले पानी पूछते थे फिर कोई और बात करते थे।

स्त्री : नहीं जी, किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं। अभी हम (एक लड़की की ओर इशारा करके) इसकी मामी की ओर से होकर आ रहे हैं। उन्होंने बहुत कुछ खिलाया-पिलाया है।

बूआ : नहीं जी, फिर भी यहाँ से ऐसे कैसे जाएँगी ! जा शीला !

शीला : क्या लाऊँ ?

स्त्री : नहीं जी, अब बिलकुल इच्छा नही है। ऐसे जाया जाए, क्या लाभ ! फिर आएँगे तो जो मर्जी खिला-पिला दीजिए।

बूआ : अजी ऐसे आपका आना-जाना कब होता है ?

स्त्री : नहीं जी ! वहू जब फेरे से वापस आएगी तो फिर आऊँगी।

बूआ : हाँ पंद्रह-बीस दिन तो लगाएगी ही।

स्त्री : बस बीस-बाईस दिन में आऊँगी।

बूआ : आइए, जरूर आपका खानपान उधार रहा'''।

स्त्री : (हँसकर) अच्छा जी'''नमस्ते जी।

सब खड़ी होती है, हाथ जोड़ती हैं। उनका प्रस्थान।

बूआ : (गौरी से) साग-सब्जी आई कि नहीं ?

गौरी : आ गई।

बूआ : शंकर आ गया है ? किधर है ?

गौरी : उधर हैं।

बूआ : छील-छाल दी ?

गौरी : छील रही थी, शीला बुलाने आ गई।

बूआ : अच्छा जा, अब छील ले।

गौरी : इधर जरा मैंने तैयारी भी करनी है।

बूआ : तैयारी करनी है ? ''' (सोचकर) अच्छा, तू तैयारी कर, मैं और शीला उधर जाते हैं। चल शीला !

बुआ और शीला का प्रस्थान। गौरी अपना अटैचीकेस खोलती है और कपड़े

निकाल-निकालकर इधर-उधर छाँटती है। शंकर का प्रवेश।

शंकर : खूब तैयारियाँ हो रही हैं !

गौरी : आप भी तो तैयारियाँ कीजिए न। फिर देर न हो जाए।

शंकर : मैंने क्या करना है ! मेरी तैयारी को तो दो मिनट लगेंगे।

गौरी : करेंगे तो दो मिनट लगेंगे। इधर-उधर घूमते रहेंगे तो दो मिनट के दो घण्टे लग जाएँगे।

शंकर : अभी करता हूँ।...हाँ याद आया। बूआजी कह रही हैं कि गहने-वहने सब निकाल लो।

गौरी : क्यों ?

शंकर : मुझे क्या मालूम ? शायद वह उनमें से तुम्हारे ले जाने के लिए छाँटती होंगी।

गौरी : छाँटने की क्या ज़रूरत है। मैं तो सभी ले जाऊँगी।

शंकर : सब अस्सी तोला सोना क्या करोगी ?

गौरी : साथ ले जाऊँगी। पहली बार है, सब पूछेंगे।

शंकर : पूछेंगे तो कह देना लाई हूँ। सब के सब पहनने की तो ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी।

गौरी : झूठ-झूठ सबको कह दूँगी तो सब खिल्ली उड़ाएँगे कि माँगे हुए गहने थे जो वहीं छोड़ आई। चंदा का किस्सा आपको पता है या नहीं ! अभी तक चर्चा होती है।

शंकर : भई उसका सोना था भी कम न।

गौरी : कम-अधिक का प्रश्न नहीं है।...और फिर बूआजी

यहां पर क्या करेंगी ?

शंकर : सँभालकर रख छोड़ेंगी।

गौरी : और मैं क्या, ऐसे दूंगी ? ...ऐसा नही हो सकता। मैं सभी गहने साथ ले जाऊँगी।

शंकर : भई मुझे कुछ पता नहीं। बूआजी कह रही थी और मैंने तुम्हें कह दिया है।

गौरी : बूआजी तो ऐसे कहती ही रहती हैं।

शंकर : ऐसी बात मत करो, बूआजी सब सोच-समझकर बात करती हैं।

गौरी : सोच-समझ उनकी देख ली है। पता है उन्होंने दूसरों के सामने मुझे कितना लज्जित किया है। *(भर्राई आवाज़ में)* तुम्हारी बूआजी तो बिल्ली के कान कुत्ते को लगाती हैं। इधर चोर को कहती हैं चोरी कर और उधर साह को कहती हैं तुम्हारी चोरी हो रही है।

शंकर : (हैरान होकर) क्यों, क्या बात हुई ?

गौरी : बात क्या होनी है, तुम्हारी बूआ से मेरा गुजारा नहीं होगा। हर ओर अपने को सच्चा सिद्ध करती है। दूसरों को बिल्कुल बुद्धू समझती है।

शंकर : (घबराकर) ज़रा धीरे बोलो।

बाहर को झांकता है।

गौरी : बस तुम हर समय मुझे ही दबाते रहो। मैं अब धीरे नहीं बोलूंगी।

शंकर : *(दबी आवाज़ में) बात क्या हुई है ? कुछ बताओ* भी !

गौरी : सुबह-सुबह मुझे कहा मुँह धो लो। जब मैं मुँह-हाथ धोकर आई तो कहने लगी नहाई क्यों नहीं ? आपके सामने की ही बात है। मैंने कहा कि कपड़े बदल लूँ तो मुझे रोक दिया। जब वे मिलने आईं तो कहती हैं, कई बार कहा है कपड़े बदल लो मेरी मानती ही नहीं। हर समय अपने जमाने की बात करेंगी। अभी जो बात कहेंगी थोड़ी देर बाद उसी के उलट कहने लगेंगी।

शंकर : बस यही बातें हैं ?

गौरी : सैकड़ों बातें हैं। एक-दो हों तो गिनाऊँ।

शंकर : भई बड़ी हैं, जो कुछ भी कहें हमें सहन करना पड़ेगा।

गौरी : बड़ी हैं ठीक है। पर बड़ों को भी तो कुछ सोच-समझ कर बात करनी चाहिए।

शंकर : *अच्छा-अच्छा*'''देख छोटू आ रहा है। *आँखें* पोंछ ले।

गौरी : मैं बहुत तंग आ गई हूँ।

आँसू पोंछती है।

छोटू : (आकर) बूआजी कह रही हैं कि गहने-वहने सब निकाल कर रखो। मैं अभी आ रही हूँ।

शंकर : अच्छा निकालते हैं। तू जा और जल्दी से ताँगा ले आ।

छोटू का प्रस्थान

गौरी : मैं एक गहना भी नहीं निकालूँगी। मुझे जो दिया गया है, वह सब मेरा है। मैं चाहे जहाँ ले जाऊँ।

बस। आप यदि बूआ से डरते हो तो डरो। मैं सब अपने-आप कह लूंगी।

शंकर : नहीं-नहीं, तुम्हारा कुछ कहना अच्छा नहीं। मैं सब ठीक कर लूंगा।

गौरी : नहीं, बूआ के सामने आपकी ज़बान नहीं खुलती! मैं सब कुछ कह लूंगी।

शंकर : देखो! कोई ऐसी-वैसी बात न कह बैठना।

गौरी : आप हर समय मुझे ही दबाते रहेंगे। अच्छा मैं कुछ ऐसी-वैसी बात न करूँगी। परन्तु मैं अपने गहने अवश्य साथ ले जाऊँगी।

शकर : मुझे बात करने देना।

गौरी : आप ढीली बात करते हो। मैं ठीक समझा दूंगी।

शकर : नहीं, पहले मैं बात करूँगा।

गौरी : यदि आप जरा ढीले हुए तो मैं बोल पड़ूंगी।

शंकर : अच्छा बोल पड़ना। पर सोच-समझ कर।

गौरी : अच्छा···

बूआ का प्रवेश

बूआ : बहू क्या बात है? छोटू ने आकर कहा तो मुझसे बैठा नहीं गया। क्यों? रो क्यों रही हो?

गौरी के पास पलंग पर बैठती है। गौरी मुंह नीचे किए बैठी रहती है।

शंकर : बस, ज़रा अपनी माँ की याद आ गई इसे।

बूआ : माँ की याद! बस! मेरा तो सारा शरीर थर-थर काँपने लगा। मैं सोचने लगी ऐसा क्या हो गया जो वह रोने लगी। (थोड़ा हँसकर) बस दो दिन में

ही माँ के बिना रोने लगी और फिर आज तो जा रही हो। हमारा भी तो जमाना था। ब्याह के बाद लड़कियाँ छः-छः महीने तक माँ की सूरत तक नहीं देखती थीं।

गौरी चुप रहती है।

: (उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए) इसमें उदास होने की क्या बात है। तुम्हें यहाँ पर कोई दु:ख है? या तुम्हें मायके जाने से किसी ने रोका है। उठो-उठो, तैयारी करो, संध्या तक माँ के पास पहुँच जाओगी। उठो-उठो, शाबाश!

गौरी उठती है और नीचे ट्रंक खोलकर बैठ जाती है।

: अच्छे-अच्छे कपड़े ले जाना।...और हाँ, बहू! उस दिन जो गहने उतार रखने को कहा था वे कहाँ रखे थे?

गौरी : मेरे पास रखे हैं।

बूआ : वे जरा निकालना तो?

शंकर : वे अब निकालने की क्या आवश्यकता है बूआजी? इतना समय कहाँ है?

बूआ : तू चुप रह। जिस बात की समझ न हुई तो चुप रहा। हाँ बहू, निकालना जरा गहने?

शंकर चुप रहता है।

गौरी : वे तो सब मेरे पास ठीक रखे हैं।

बूआ : सो तो ठीक है; पर निकालने तो पड़ेंगे ही न। तुम्हें देने के लिए छाँटने तो पड़ेंगे। और बाकी भी तो

सँभालकर रखने पड़ेंगे।

शंकर : वे तो यह सारे ही ले जा रही है।

बूआ : तुम क्यों बीच में बोलते हो ? बात मैं उससे कर रही हूँ, उत्तर यह दे रहा है ! सारे ले जाकर वहाँ क्या नुमाइश खोलनी है !

शंकर : पहली बार जो जा रही है बूआजी, सब पूछेंगे।

बूआ : फिर तू उत्तर दे रहा है ? पता नहीं कैसा समाँ है ! हमारा भी तो जमाना था कि घर के काम-काज में लड़के ध्यान तक नहीं देते थे। माँ-बाप जो कह दें सो ठीक।

शंकर : मैं तो कुछ नहीं कह रहा। उचित बात थी सो कह दी है।

बूआ : मैं क्या अनुचित कर रही हूँ। हाय ! हाय ! कैसा समाँ है ! कल ब्याह हुआ आज बहू का पक्ष लेने लगा। हमारा भी तो जमाना था। माँ-बाप का कहा लोहे और पत्थर की लकीर समझते थे।...मैं सब ठीक कर रही हूँ। तुम्हारी शिक्षा की जरूरत नहीं है। तूने जाना है तो जा, बैठना है तो चुप-चाप बैठा रह।

शंकर एक कुर्सी पर बैठ जाता है।

: (गौरी से) हाँ बहू, निकाल तो सारे गहने।

गौरी : वे तो मैंने सँभालकर ज्यूलरी बॉक्स में रख छोड़े हैं।

बूआ : रख छोड़े हैं तो निकाल भी तो सकती हो।

गौरी : अब तो कठिन है। बॉक्स तो मैंने अटैची में सबसे

नीचे रखा है।

बूआ : तो फिर क्या हुआ ? निकालना तो है ही।

गौरी : क्या आवश्यकता है ?

बूआ : क्या आवश्यकता है ? क्या सारा सोना लादकर ले जाने का विचार है।

गौरी : क्या हर्ज है ?

बूआ : हर्ज भी कुछ नहीं। न भई समाँ वड़ा भयानक है ! वस का सफर है। कहीं इधर-उधर हो जाए तो !

गौरी : अटैची तो हम अपने हाथ में ही रखेंगे।

बूआ : नहीं-नहीं। जोखिम साथ ले जाना अच्छा नहीं।

गौरी : पहली बार है तो ले जाना ही पड़ेगा।

बूआ : हाँ पहली है तो क्या हुआ ? पहनने जितना ही तो ले जाएगी ?

गौरी : वरी में सब देख चुके हैं। अब पूछेंगे तो क्या कहूँगी ?

बूआ : कह देना सँभालकर रखे हुए हैं।

गौरी : इस वात को कौन सुनता है ? सब चर्चा करते है। मेरे मामा की लड़की चंदा के साथ ऐसा ही किस्सा हो चुका है। और फिर यहाँ पर उन गहनों का क्या होगा ?

बूआ : होना क्या है ? सँभालकर रखे जाएँगे।

गौरी : सँभालकर रखने की वात है न, तो वहाँ भी तो सँभाल हो सकती है। पहली वार न ले जाने से सब खिल्ली उड़ाएँगे कि माँगे हुए गहने थे जो वहीं छोड़ आई।

बूआ : माँगे हुए कौन कहता है ? एक-एक माश। हमारे अपने घर का है।

गौरी : फिर डर किस बात का है ? जब अपने हैं तो दूसरों को बातें बनाने का अवसर ही क्यों दिया जाए ?

बूआ : डर किस बात का होना है ? पर सफर है, जोखिम साथ ले जाना भी तो एक संकट मोल लेना है।

गौरी : सकट की कोई बात नही। हम दोनों हैं और फिर अटैची भी अपने ही हाथ में रखेंगे। इसमें डर की क्या बात है। आप बिलकुल निश्चिन्त रहिए। कुछ नहीं होगा।

निस्तब्धता

बूआ : अच्छा तो तुमने सब साथ ले जाने का फैसला पहले ही कर रखा है ? कैसा समाँ है ! सब बात का फैसला आजकल की छोरियाँ अपने-आप ही कर लेती हैं। हमारा भी तो जमाना था। सास के फैसले को अटल समझती थीं। अच्छा यदि ले जाने हैं तो ले जा और सँभाल भी ले, सब ठीक है न ?

गौरी : वे मैंने सब सँभालकर ही रखे है।

बूआ : अच्छा तो तुमने दृढ निश्चय कर रखा है ?

गौरी : जी हाँ।

बूआ : हाय-हाय ! कैसा समाँ है ! दो दिन में ही कैंची की तरह जबान चलाने लगी। हमारा भी तो जमाना था। उमर बीत जाती थी सास के सामने मुँह नही खोलती थी।...अच्छा तो मेरा भी फैसला सुन ले।

फेरे के लिए दो दिन ही काफी हैं और फिर यहाँ आकर सारा सोना बैंक में रखवा देना पड़ेगा।

शंकर : हाँ, यह ठीक है।

बूआ : तू मत बोल ! मुझे पता है, यह सब तुम दोनों की मिली भगत है। तभी तो आज तू इतना टर्र-टर्र कर रहा है। हमारा भी जमाना था कि ब्याह के बाद लड़के माँ-बाप का पक्ष लेते थे।...और एक बार फिर भी सुन लो, वहाँ दो दिन से अधिक नहीं लगाने दूंगी। और सारे गहने बैंक में रखवा दूंगी, हाँ।

प्रस्थान

शंकर : यह तुमने अच्छा नहीं किया, बूआजी को नाराज़ कर दिया।

गौरी : नाराज़ क्या किया है ! जो बात उचित है वही की है। आप ही बताइए, मैंने अनुचित कहा है !

शंकर : पर वह न जाने क्या-क्या पिताजी से कहेगी।

गौरी : कहती फिरे।

शंकर : पर आज तुमने बूआ को चुप करा दिया। पता नहीं तुम किस गुरु की पढ़ी हुई हो।

गौरी : मैं न बोलती तो आपसे बात हो भी नहीं सकती थी।

शंकर : क्यों ? मैंने कहा नहीं था ?

गौरी : और फिर बूआजी ने चुप भी तो करा दिया था।

छोटू का प्रवेश

छोटू : तांगा आ गया है।

शंकर : अच्छा तो चल छोटू, सामान बाहर निकाल।

छोटू ट्रंक लेकर बाहर जाता है। शंकर अटैची उठाता है और गौरी छोटी डलिया उठाती है। बूआ और शीला का प्रवेश।

बूआ : (आकर गम्भीता से) खाना-वाना नहीं खाओगे?

शंकर : बाँध दीजिए, साथ लेते जाएँगे।

बूआ : जा शीला, बाँध दे। (शीला का जाना) इतना-सा सामान क्यों लेते जा रहे हो?

शंकर : ऐसे ही...।

शंकर और गौरी बुआ के पाँव छूते हैं। बूआ बिना बोले आशीर्वाद देती है। शंकर और गौरी का प्रस्थान।

बूआ : हाय-हाय! जमाने को तो पर लग गए हैं। हमारा भी तो जमाना था। बहूएँ सास के सामने थर-थर काँपती थीं।

पीछे की खिड़की से बाहर झांकती है। छोटू और शीला का प्रवेश।

शीला : ये फिर कब आएँगे बूआजी?

बूआ : दो दिन में आना पड़ेगा।

छोटू : वे अभी नहीं आएँगे बूआजी!

बूआ : कैसे?

छोटू : भाभी कह रही थी भैया से कि एक मास तो वहीं रहना है, फिर जब अपना अलग मकान लोगे तो मैं यहाँ आऊँगी।

शीला : भाभी तो यह भी कह रही थी कि सोना मैं सारा वहीं रख आऊँगी। यह सब मेरा है, मेरे ही पास रहेगा।

बूआ : हाय-हाय, मैं लुट गई। शीला भाग-भाग, रोक! छोटू, जा, जल्दी पिताजी को बुला। जल्दी कर। हाय-हाय! कैसा समाँ है! हमारा भी तो जमाना था···हाय-हाय···

प्रस्थान।

पटाक्षेप

तेरा-मेरा

पैसा एक ऐसी चीज है जिसके लिए प्रत्येक परिवार में भाई-भाई, माँ-बेटा, बहन-भाई के बीच निजी स्वार्थों को लेकर मन-मुटाव हो जाता है। पैसा प्राप्त करने के लिए कई प्रकार की पैंतरेबाजी से काम लेने में वे नहीं हिचकिचाते। इसी की झलक प्रस्तुत नाटक में है।

पात्र-परिचय

राम—आयु ३५ वर्ष	भाई
श्याम—आयु २५ वर्ष	
बिरजू—आयु १६ वर्ष	

इंस्पैक्टर—डाकखाने का इंस्पैक्टर

माँ—राम, श्याम और बिरजू की माँ, आयु ५५ वर्ष

विमला—राम, श्याम और बिरजू की बहन, आयु २० वर्ष

जमना—राम की पत्नी, आयु ३० वर्ष

राधा—श्याम की पत्नी, आयु २२ वर्ष

[एक कमरा। बायी ओर एक दरवाजा दूसरे कमरे में खुलता है और दायीं ओर एक दरवाजा बाहर को खुलता है। सामने की दीवार मे एक खिड़की है और दायी ओर की दीवार में भी एक खिड़की है। सामने की खिड़की के ठीक नीचे एक चारपाई पर अधमैला बिछौना बिछा है जिस पर विमला अस्वस्थ दशा मे चादर ओढ़कर सोई है। साथ मे एक छोटी सी मेज़ पर दवाई की शीशियाँ, गिलास, चाय का प्याला, प्लेट आदि पड़े है। बायी ओर की दीवार की ओर एक शैल्फ पड़ा है जिस पर कुछ पुस्तकें पड़ी हैं। ऊपर दीवार पर कोने वाली दीवारों से एक रस्सी बँधी है जिस पर कुछ मैले कपड़े टँगे हैं। बायी ओर दो कुर्सियाँ पडी हैं।

पर्दा उठता है तो ये सारी चीजें अपने-अपने स्थान पर दिखाई देती है। चारपाई पर सोई विमला कराहकर करवट बदलकर सो जाती है। श्याम मुँह पोंछता जल्दी से आता है और कपड़े बदलने के लिए खूँटी से कपड़े उतारता है। कमीज़ बदलने लगता है तभी राधा मुन्ने को बगल मे उठाए प्रवेश करती है।]

राधा : (आकर) मेरा तो विचार है आज दफ्तर न ही जाओ तो अच्छा है।

श्याम : (कमीज पहनते हुए हैरानी से) क्यों ?

राधा : कभी-कभी ऐसी बातें करते हो जैसे तुम्हें कुछ पता ही नही होता···

श्याम हैरानी से देखता रहता है।

: वह इंस्पैक्टर आएगा कि नहीं।

श्याम : आएगा तो आए, उससे मेरे आफिस न जाने का क्या सम्बन्ध ?

राधा : बस इन्ही बातों से मुझे आग लगती है। तुम नहीं रहोगे तो बात उससे कौन करेगा ?

श्याम : माँ है, तुम हो···बिरजू है।

राधा : बस यही तो तुम्हारी बातें हैं। माँ जो बात करेगी, वह क्या तुम्हारे पक्ष की बात होगी ? और मै जो बात करूँगी वह तुम्हारे जितनी थोड़ी होगी ? मैं दो अक्खर पढ़ी होती तो तुम्हें कभी किसी बात का पता ही न लगने देती। सब कुछ कर-कराकर सामने धर देती।

श्याम : (मुस्कराकर) मैंने कोई अनोखी बात करनी है ?

राधा : हाँ ! अनोखी तो करनी है। तुम नही रहोगे तो माँ प्रधान बनेगी और जो वह चाहेगी वही करेगी। मुझे तो बोलने का अवसर ही नहीं देगी। तुम रहोगे तो मेरा विश्वास है कि माँ भी कुछ नहीं बोलेगी। और फिर कोई कानूनी बात आ जाती है,

सरकारी काम जो हुआ। हम औरतें क्या जवाब देंगी ?

श्याम : कानूनी बात क्या आती है ? वह आकर पूछेगा माँ का नाम ? और फिर पूछेगा कितने और हिस्सेदार हैं और कितने हिस्से करने हैं, बस।

राधा : अब इसी पर ही सोच लो। (अंदर देखकर, फिर सोई हुई विमला को देखकर गुप्त स्वर में) माँ तो केवल अपना नाम लिखाएगी।

श्याम : लिखाएगी तो लिखाए ! हिस्सा तो आखिर सबका ही होगा। यह थोड़े ही है कि माँ सब कुछ अपने पास रख छोड़ेगी।

राधा : तुम जैसा भोला भी दुनिया में कोई न हो ! रख तो नहीं छोड़ेगी पर माँ का विचार क्या है तुम नहीं जानते हो ?...वह कहती है कि मैं उसमें से विमला और बिरजू की शादी के लिए और बिरजू की पढ़ाई के लिए निकाल लूँगी। यह तुम देख लेना, आधा पैसा निकालकर आधे को ही सबमें बाँटेगी।

श्याम : इससे तो कोई फर्क नहीं पड़ता। विमला और बिरजू का ब्याह भी तो आखिर घर से ही होगा।

राधा : घर से क्यों होगा ? यही तो तुम्हारी बातें हैं। हिस्से जो होंगे उसमें बिरजू का हिस्सा भी तो होगा। वह क्या करेगा ? फिर उसे और पैसा किस बात के लिए चाहिए ? बाकी रही विमला, तो माँ जो अपना हिस्सा लेगी तो वह किस काम आएगा ?

माँ को तो वैसे अपने हिस्से की आवश्यकता ही क्या है ? तो फिर माँ का हिस्सा भी तो सबका साँझा है ।

श्याम : देखो क्या होता है !

राधा : यही तुम्हारी टालमटोल की आदत अच्छी नहीं । कभी मन-चित्त लगाकर बात न सुनोगे ।

श्याम : ओहो, सुन तो लिया । पैसा तो आने दो ।

राधा : आने क्या दो, उस समय तुम मेरी थोड़े सुनोगे । माँ जो कहेगी हाँ में हाँ मिलाते जाओगे बस ।···मैं इसलिए पहले कह रही हूँ कि मैं माँ को सारे पैसे में से कुछ भी नहीं निकालने दूँगी । हमारा हिस्सा दे दें, फिर उनकी इच्छा ।

श्याम : अच्छा···अच्छा समय तो आए !

राधा : समय आए क्या, वह तो आ गया । बारह बजे के लगभग उसने आने को कहा है, तभी तो कह रही हूँ तुम दफ्तर मत जाओ । यही समय है । हिस्से-विस्से ठीक बन गए तो बन गए, नहीं तो फिर कुछ नहीं हो सकेगा ।

श्याम : अच्छा···

कमीज पहनता है ।

राधा : तुम फिर कपड़े पहन रहे हो ?

श्याम : ओहो, क्या नंगा खड़ा रहूँगा । कपड़े तो आखिर पहनने ही हैं न ।

राधा : दफ्तर से छुट्टी कर रहे हो न ?

श्याम : जब तुम कहती हो तो करनी ही पड़ेगी ।

राधा : मैं क्या कहती हूँ, तुम्हें क्या स्वयं दिखाई नहीं देता ? मैंने क्या कोई झूठी बात कही है ?

श्याम : नहीं, बात तो ठीक है ?

राधा : और हाँ, एक बात और याद रखना (धीरे से) माँ के सामने आते ही तुम्हारे हाथ-पाँव फूलने लगते हैं। जरा डटकर बात करना।

श्याम : कोई लड़ाई थोड़े ही हो रही है।

राधा : तुम तो हर बात उल्टी समझोगे। मैं कब लड़ाई की बात कह रही हूँ। परन्तु अपना अधिकार माँगना तो कोई लड़ाई नहीं। बात जरा सोच-समझ कर करना।

श्याम : तुम चिन्ता मत करो।

राधा : अच्छा, मैं जाकर जरा बिल्लू का मुंह धो लूं, देखो तो सही भंगी बना हुआ है।

बगल वाले मुन्ने को दिखाती है। जाते हुए फिर लौटती है।

सुनो, यदि मेरी आवश्यकता पड़े तो मुझे बुलवा लेना, या आवाज ही दे देना, मैं आ जाऊँगी।

जाती है।

आवाज : बिरजू···बिरजू · !

श्याम : (दरवाजे के पीछे जाकर) बिरजू तो इधर नहीं है।

माँ : (आकर) बिरजू इधर नहीं है ? कहाँ गया सुबह-सुबह ? और तुम अभी तक तैयार नहीं हुए। पौने दस तो बज गए। क्या आज दफ्तर नहीं जा रहे हो ?

श्याम : नहीं···।

मां : क्यों ?

श्याम : आज मेरी तबीयत कुछ ठीक नहीं। पेट में कुछ गड़बड़ हो रही है।

मां : तो ठहरो, थोड़ी अजवाइन फांक लो। पेट में गड़बड़ ऐसे होती ही रहती है। यह कोई बड़ी बात नहीं। इसके लिए छुट्टी लेने की क्या आवश्यकता है ?

अजवाइन की डिब्बी उठा लाती है।

: लो यह थोड़ी-सी खा लो।

श्याम : (खाते हुए) सुना है कल कोई सरकारी दफ्तर से इंस्पेक्टर आया था।

मां : हां, आया तो था।

श्याम : क्या बात हुई ?

मां : कुछ नही, कुछ पूछताछ करने आया था। मैं नहीं थी सो···

श्याम : आज भी आएगा ?

मां : हां, कह तो गया था। यह पता नहीं आता भी है या नहीं।

श्याम : कह गया था तो अवश्य आएगा।

मां : आएगा तो ठीक।

श्याम : मेरा रहना कोई ज़रूरी नहीं ?

मां : तुम रहकर क्या करोगे ? मैं जो हूँ, सब कुछ कर लूँगी। तुम बेशक अपने दफ्तर जाओ।

श्याम : नहीं। दफ्तर से तो मैंने छुट्टी ले ली है। तबीयत

मेरी ठीक नहीं, पेट के साथ गुर्दे में भी दर्द होने लगा है।

माँ : यह तो ठीक नहीं। इसका तो लगकर इलाज करो। वैद्य को बुलाऊँ…

श्याम : नहो। एक बार पहले भो हुआ था। फिर अपने-आप ठीक हो गया था।

माँ : मेरा विचार है थोड़ा-सा मल दूँ तो ठीक हो जाएगा।

श्याम : नहीं (कुर्सी पर बैठकर) बैठने से काफी फर्क दिखाई देता है।

माँ : तो उधर जाकर पलँग पर लेट रहो। थोड़ी देर में ठीक हो जाओगे।

श्याम : एक बात मेरे ध्यान में आई है।

माँ : क्या ?

श्याम : इंस्पैक्टर से बात करने से पहले हमें घर में आपस में बातचीत कर लेनी चाहिए। यह न हो कि मैं कुछ कहूँ और तुम कुछ और ही कह दो।

माँ : तुम्हारे कुछ कहने की क्या आवश्यकता है ? मैं ही सब कुछ ठीक कर दूँगी।

श्याम : लेकिन तुम क्या कहोगी ? यह भी तो पता लगना चाहिए।

माँ : पता लगने की क्या आवश्यकता है ? मैं कोई किसी का बुरा थोड़े करूँगी ! पैसा सबका है। मैं अभी इसके हिस्से-विस्से नहीं करवाऊँगी, इकट्ठा ही ठीक है। सबका काम तो चल ही रहा है, बाँटने की क्या

आवश्यकता है? सारा पैसा मैं बैंक रखवा दूँगी।

श्याम : सो तो ठीक है, पर दफ्तरों में तुम कहाँ जाती फिरोगी। मेरा तो विचार है कि अलग-अलग करवा देना चाहिए।

माँ : अलग-अलग करवाने से भी तो मुझे दफ्तरों में जाना ही पड़ेगा।

श्याम : उसका तो एक ही इलाज है। वह यह कि तुम हमें अपना मुख्तियारनामा दे दो। बस, बाकी हम भुगतेंगे।

माँ : अब और झंझट मत फैलाओ। पहले तो राम-राम करके भगवान ने सुनी है। कितनी मुद्दत के बाद तो मिल रहा है। यदि और झंझट डालोगे तो दो-तीन साल और लग जाएँगे। उनके मरने के बाद तुम्हीं बताओ कितने हाथ-पैर मारे हैं। दो साल हो गए, फैल का कुछ पता ही नहीं लग रहा था। अब वह अपने-आप घर बैठे ही मिल रहा है तो तुम और झंझट फैला रहे हो।

श्याम : नहीं, मैं तो तुम्हारे लिए कह रहा था।

माँ : मेरी तुम चिन्ता मत करो। संकट जो झेलने हैं, वह झेलने ही हैं। उनके मरने के बाद अब मैं स्त्री नहीं रही। तुम्ही बताओ, पैंनशन के बारे में भी तो मुझे दो-एक बार कचहरी जाना पड़ा था। मैं इन बातों की आदी हो गई हूँ। बस, अब तो यह विचार है कि किसी प्रकार उनका यह पैसा भी मिल जाए।

श्याम : हाँ। बस जी० पी० एफ० मिले तो यह झंझट भी समाप्त हो।

मां : तुम लोगों को क्या मुझ पर विश्वास नहीं ?

श्याम : नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं। मैंने तो बस एक बात कही है।

खड़ा हो जाता है।

मां : अब तुम्हारे दर्द का क्या हाल है?

श्याम : ठीक हो जाएगा।

मां : हो जाएगा नहीं, उधर जाकर आराम करो, तभी ठीक है।

श्याम : हां जाता हूँ।

मां : तुमने छुट्टी ली है। मैं चाहती थी आज विमला को ले जाकर वैद्यजी को दिखा आऊं। पर तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं। वह बिरजू न जाने कहाँ निकल गया है !

श्याम : हाँ-हाँ, इसे आज दिखा आओ। कोई बात नहीं, बिरजू को साथ लेकर रिक्शा पर चली जाओ। बिरजू साइकिल पर चला जाएगा।

मां : हाँ। अच्छा तुम उधर जाओ। यदि बिरजू हो तो उसे भेज दो।

श्याम : अच्छा।

जाता है।

मां : (विमला के पास जाकर) विम्मी···विम्मी···

विमला : (धीरे से) हूँ।

मां : अब कैसी तबीयत है बेटा ! दस बजने वाले हैं,

अब जागो बेटा। काफी देरी हो गई है।

विमला : मैं कभी की जाग रही हूँ, मां।

मां : अच्छा...दवाई पी ली है या नहीं?

विमला : नहीं।

मां : कभी की जाग रही थी तो मुझे क्योंनहीं बुलाया? उठ, एक खुराक जो पड़ी है वह पी ले, फिर आज तुम्हें वैद्यजी के यहां ले जाऊंगी।

दवाई देती है।

विमला : (दवाई लेते हुए) इंस्पैक्टर कब आएगा?

मां : कौन इंस्पैक्टर?

विमला : (रोते हुए) वही सरकारी दफ्तर वाला...।

मां : दफ्तर वाला? तुम्हें उससे क्या?

विमला : कितने हिस्से होंगे?

मां : तुम्हें पैसों से क्या, उन हिस्सों से क्या? सोते-सोते कोई सपना तो नहीं देखा?

विमला : मां, मैंने भाभी और श्याम भैया की बातें सुनी हैं। भाभी के कहने पर ही श्याम भैया तुमसे पैसे की बात छेड़ रहे थे। भाभी भैया को खूब बहका रही थी।

मां : बहकाने दो। पैसा तो मैं सारा का सारा बैंक में रखवा दूंगी। यह तो मैंने श्याम को भी बता दिया है।

विमला : पर भाभी ऐसा नहीं होने देगी।

मां : क्यों नहीं होने देगी। उसके मायके की संपत्ति तो नहीं, जो उसका ज़ोर चलेगा।

विमला : भैया को वास्तव में कोई दर्द-वर्द नहीं है। यह तो भाभी ने उन्हें छुट्टी लेने को कहा है।

माँ : यह तो मैं उसकी बातों से ही समझ रही थी। बेशक छुट्टी ले ले। मैं तो अभी एक पाई को भी हाथ नही लगाने दूँगी।

विमला : भाभी अपना हिस्सा नहीं छोड़ेगी। यह मैं बता दूँ।

माँ : नहीं छोड़ेगी, क्या उसके अखत्यार है। मैं घर को देखूँ या उसके हिस्से को ? दो का व्याह करना है। विरजू की पढ़ाई है, तुम्हारी बीमारी है। यह सब कहाँ से होगा। इतना समय इसी पैसे के सहारे तो काट दिया है। तुम्हारे पिताजी जीवित होते तो कोई बात नहीं थी। अब तो सारी जिम्मेदारी मुझ पर है। *यह क्या उनको दिखाई नही देता !*

विमला : भाभी कह रही थी विरजू जो अपना हिस्सा लेगा वह उसकी पढ़ाई और व्याह मे काम आएगा। और तुम्हारे बारे में कह रही थी कि माँ को तो हिस्से की आवश्यकता ही नही।

माँ : और जो उधार लेकर इतना कर्जा बढ़ा हुआ है वह क्या इसका बाप उतारेगा ? कहने दो जो कहती है, मुझे इसकी चिन्ता नही। मैं तो एक पाई तक को भी किसी को हाथ नहीं लगाने दूँगी। तभी तो मैंने श्याम को बता दिया है कि मैं अभी हिस्से भी नहीं करवाऊँगी।

विमला : मेरा विचार है, भाभी अवश्य कोई झगड़ा खड़ा करेगी।

माँ : तुम घबराओ नहीं। मैंने सब कुछ निर्णय कर लिया है। मैं इसके झगड़ों से नहीं डरती। राम दूर रहता है, उसे अभी इस बात का पता नहीं है। श्याम को मैंने समझा दिया है। यह अकेली क्या करेगी ?

विमला : मुझे ऐसा लगता है, श्याम भैया भी उसका पक्ष लें।

माँ : ले, बेशक ले। तुम इन बातों को सोचो तक नहीं, तुम आराम करो।

विमला : यह तो ठीक है। पर मुझे झगड़े से डर लगता है। तुम बिला शक उनको हिस्सा दे दो। हम जैसे भी होगा, गुजारा कर लेंगे।

माँ : तुम तो पागल हो, सब कुछ दे दूँ, तो उधार कौन उतारेगा ? और मेरे पास क्या रहेगा ? तुम्हारा भी कुछ करना है कि नहीं।

विमला : पर झगड़ा नही होना चाहिए।

माँ : तुम्हें इससे क्या ? तुम ध्यान भी मत दो। मैं जानूँ मेरा काम। तुम आराम करो। बस···अच्छा कपड़े बदल लो, मैं ही रिक्शा लाती हूँ। देर हो रही है। न जाने वहाँ कितनी देर लग जाए, बारह बजे तो इन्स्पैक्टर आ जाएगा।

विमला : (खाँसती हुई) सब बात शांति से करना। झगड़े की बात न करना।

माँ : (लापरवाही से) अच्छा···अच्छा···चल उठ, जल्दी कर···अच्छा कपड़ों को रहने दे, ऊपर चादर ओढ़

ले। बाहर तक चल तो सकती हो न···

विमला : हाँ।

माँ : अच्छा मैं रिक्शा ले आऊँ···

जाने लगती है, बिरजू का प्रवेश।

: कहाँ गए थे तुम ? सुबह-सुबह कहाँ भाग जाते हो? भई, घर में काम होता है, कभी जरूरत पड़ती है।

बिरजू : जरा सुरेश के घर गया था।

माँ : अच्छा चल, जा, जल्दी से रिक्शा ले आ। विमला को ले जाना है।

बिरजू : रिक्शा मैं ले आया हूँ। श्याम भैया ने मुझे बता दिया था।

माँ : चलो अच्छा किया। तुम कैसे चलोगे ?

बिरजू : तुम विमला को लेकर रिक्शे में चलो, मैं साईकल पर आता हूँ।

माँ : ठीक है। चलो विम्मी, जल्दी करो। (बिरजू से) श्याम बैठा है अन्दर ?

बिरजू : नहीं, वह अभी-अभी कहीं गए हैं।

माँ : बाहर ? उसकी तो तबीयत ठीक नहीं थी। फिर वह कहाँ चला गया ?

बिरजू : पता नहीं।

माँ : अच्छा भाभी को बुलाओ। उसे कहना उधर का दरवाज़ा बन्द करके आ जाए।

बिरजू जाता है। माँ विमला को चादर ओढाती है और उसे सहारा देकर

नीचे उतारती है। विरजू और राधा बिल्लू को उठाए आते है।

माँ : देखो राधा हम विम्मी को लेकर…

राधा : हाँ, कह तो रहे थे। पता नहीं शायद बाहर खड़े हों।

माँ : अच्छा तो हम जा रहे हैं।

सहारा देते हुए विम्मी को ले जाती है। पीछे विरजू जाता है। राधा बिल्लू को विठाकर एक बार कमरे को देखती है। फिर खिड़की से बाहर झाँकती है, फिर कमरा ठीक करती है और बाहर झाँकती है! श्याम का प्रवेश।

श्याम : (इधर-उधर देखकर) चले गए हैं?

राधा : हाँ।…हो आए?

श्याम : हाँ। दुकान पर जाने ही वाले थे कि मैं पहुँच गया।

राधा : मैंने कहा था न कि यही समय है—क्या कहते हैं?

श्याम : आ रहे हैं…

राधा : क्या बातें हुईं?

श्याम : बातें क्या होनी थीं? मैंने जाकर सारी बात सुनाई, तो वह हैरान रह गए। कहने लगे, मुझे कल सूचना क्यों न दी। मैंने कहा, अभी भी समय बीता नहीं। कहने लगे, बस हम अभी आते हैं।

राधा : बस अब ठीक है। माँ के आने से पहले ही आ जाएँ तो मैं बहन जी को सब समझा दूँगी।

श्याम : भैया को मैं सब समझा आया हूँ।

राधा : ठीक है। दोनों भाई मिल जाओगे तो माँ की एक न चलेगी।'''सुनो, एक बात मैं उस समय कहना भूल गई थी। माँ जो बार-बार कहती है—मैं सारा बैंक में रख दूंगी, घर का काम तो चल ही रहा है। तंग निर्वाह करने को क्या काम चलना कहते हैं। पंद्रह तारीख के बाद फिर पहली की प्रतीक्षा में घुट-घुटकर जीना। दो पैसे हाथ में आ जाने से वह हमें चैन की साँस क्यों नहीं लेने देती।

श्याम : कहा है, कई बार कहा है।

राधा : (अनसुनी करके) फिर किसका उन्नति करने को दिल नहीं चाहता। एम० ए० पास करने पर तुम्हीं ने कहा था कि तरक्की हो सकती है।

श्याम : पर अब एम० ए० करना मेरे लिए कठिन है।

राधा : ओहो ! माँ से यह कहने की क्या आवश्यकता है ? बेशक एम०ए० न करो; पर अपने पास एक बहाना तो है। और फिर नौकरियों में धरा क्या है ? तुम भी यदि भाई साहब की तरह कोई व्यापार चला लो तो कितना अच्छा है। और उसके लिए पैसे की अत्यन्त आवश्यकता है।

श्याम : व्यापार चलाना भी तो खालाजी का घर नहीं। तुम नहीं जानती, भैया ने कितनी ठोकरें खाई हैं।

राधा : न सही, पर माँ को कहने के लिए तो यह बात काफी है। पैसा मिल जाने के बाद हमारी इच्छा, हम जो करें।

श्याम : देखो । भैया आ जायें तो बात होगी ।

राधा : और यह…

आवाज : विरजू…विरजू…

श्याम : ओ, भैया आ गए हैं (खिड़की से झाँककर) भाभी भी साथ है ।

आवाज : विरजू…

श्याम : आ जाइए भाइया…आ जाइए ।

राधा खिडकी से झांकती है। श्याम बाहर जाकर उन्हें ले आता है। राधा घूंघट निकालती है। राम और उसकी पत्नी के पाँव छूती है। राम की पत्नी जमना बिल्लू को ले लेती है और चूमती है। राम कुर्सी पर बैठता है। बाकी चारपाई पर बैठते है।

राम : माँ कहाँ गई है ?

श्याम : विम्मी को दिखाने ।

राम : अब विम्मी का क्या हाल है ?

श्याम : ठीक है ।

राम : विरजू कहाँ है ?

श्याम : वह भी साथ गया है ।

जमना : यह देखो, बिल्लू से तुम बोले नही, वह अपने-आप बोलने को आ रहा है ।

राम : बिल्लू को तो मैं भूल ही गया। आओ, आओ। (बिल्लू को लेकर चूमना) तुम्हें कैसे भूलूँगा ।

श्याम : बच्चों को क्यों नहीं लाए ?

राम : (हँसकर) कोई शादी हो रही थी ?

राधा : (धीरे से) राजो को तो लेते आते ?

जमना : वह भी तंग करती है । सरला के पास छोड़ आई हूँ ।

श्याम : सरला का अब क्या हाल है ? पढ़ाई-वढ़ाई कैसे चल रही है ?

राधा : ठीक है । चल ही रही है । माँ को गए कितनी देर हो गई है ?

श्याम : आधा घंटा हो गया है ।

राम : वैद्य चाननराम के पास गए होगे ?

श्याम : हाँ ।

राम : इंसपैक्टर को कब आना है ?

श्याम : बारह बजे ।

राम : (घड़ी देखकर) ग्यारह बज गए हैं।...हूँ, क्या सोचा है फिर ?

श्याम : सोचना तो आपको है ।

जमना : माँ क्या कहती है ?

श्याम : माँ कहती है, उसके हिस्से न कराए जाएँ । केवल माँके नाम ही रहे तो ठीक है । माँ का विचार है कि यदि हिस्से करवाए गए तो हो सकता है काम को और भी देर हो जाए, इसीलिए जैसे मिलता है ले लो, बाद में देखा जाएगा ।

जमना : बाद में क्या देखा जाएगा ?

राधा : (घूंघट ठीक करते हुए) यही कि पैसा चट हो गया और क्या ! (श्याम से) सीधी बात क्यों नही

कहते कि माँ नहीं चाहती कि उस पैसे को कोई और हाथ लगाए। वह उससे बिरजू और विम्मी का व्याह और बिरजू की पढ़ाई का खर्चा करना चाहती है।

श्याम : हाँ! यही समझ लो। माँ का विचार यही है। वह कहती है घर का निर्वाह तो हो ही रहा है, उस पैसे को अलग बैंक में रख दिया जाए।

राम : ठीक है…पर…

जमना : ठीक क्या है? विम्मी का व्याह हो, बिरजू का व्याह हो, बिरजू की पढ़ाई हो तो बाकी बचा क्या जो हम लोगों को मिलेगा?

श्याम : माँ का कहना है कि बिरजू और विम्मी का व्याह भी तो घर से होना है पर…।

राम : वह तो ठीक है? …पर…।

जमना : क्या ठीक है…वह जो…।

राम : ठहरो, जरा मुझे बात करने दो। मान लो कि उन दोनों का व्याह घर से होना है…पर…।

जमना : क्यों मान लें? मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ।

राम : ठहर तो सही, वैसे बात कर रहा हूँ। मान लो कि उन दोनों का ब्याह घर से होना है। पर उसका मतलब यह थोड़े ही है कि अभी से सारा पैसा दबाकर रख लिया जाए?

राधा : (घूँघट ठीक करते हुए) हिस्से करने पर क्या बिरजू का हिस्सा न होगा? वह उसे क्या करेगा? उससे क्या उसकी पढ़ाई और ब्याह नहीं

हो सकता ?

राम : हाँ यह भी बात राधा की पते की है। बिरजू उस हिस्से का क्या करेगा ? अपनी पढ़ाई और व्याह में ही तो लगाएगा।

श्याम : माँ तो अभी हिस्से-विस्से की बात नही करती। वह तो सारा रखना चाहती है।

राधा : क्यों रखना चाहती है ? क्या और किसी को कुछ आवश्यकता नहीं ? यही तो तुम्हारी बात है। पैसा पास हो तो आदमी क्या कुछ नहीं कर सकता ?

श्याम : हाँ, यह तो ठीक है। मैं जो एम० ए० नहीं कर सका तो उसका एकमात्र कारण पैसा ही है। नहीं तो मैं आज आफिसर ग्रेड में होता। रमेश मेरे साथ कॉलेज में था। मैंने छोड़ दिया, उसने नहीं छोड़ा; एम० ए० कर लिया। इस समय प्रोफेसर लगा हुआ है। कार-बार रखी हुई है, मजे में है। एक मैं हूँ कि अभी तक यू० डी० सी० में ही धक्के खा रहा हूँ।…रमेश ही नहीं मेरे बहुत मित्र कहीं के कहीं बढ़ गए हैं केवल पैसे के कारण।

राम : हाँ यह तो बात ठीक है। बिजनेस में भी पैसे की जय है। पैसे के कारण ही मैं ऊँचा बिजनेस नहीं कर पा रहा हूँ। आज मेरे पास तीन-चार हजार आ जाए तो देखो तीन-चार हजार से तीन-चार लाख पैदा न कर लूँ तो कहना। यह बिहारीलाल, रामचंद, यह भीमसेन, छुन्नामल, जो लखपती सेठ बने बैठे हैं, कभी मुझसे भी घटिया बिजनेस था

इनका। पैसा बहाया, आज लखपती हो गए। पैसा ही पैसे को खींचता है।

राधा : और फिर हम अपना हिस्सा ही तो माँगते हैं, माँ से तो कुछ नहीं लेते।

जमना : हाँ ठीक है। माँ अपना हिस्सा रखे, बिरजू का रखे, हम उसे कुछ नहीं कहते।

राम : फिर वही प्रश्न है न। माँ कहेगी कि बिरजू तो निबट गया पर विम्मी का ब्याह ?

राधा : विम्मी का ब्याह ? माँ जो अपना हिस्सा लेगी वह किस काम आएगा ? माँ को उसके हिस्से की क्या आवश्यकता है ?

राम : हाँ, यह भी ठीक है। माँ अपना हिस्सा क्या करेगी ? विम्मी के ब्याह पर ही तो काम आएगा। यह ठीक है; इससे बिरजू का ब्याह भी हो जाएगा, उसकी पढ़ाई भी हो जाएगी, विम्मी का ब्याह भी हो जाएगा और हमारा हिस्सा भी मिल जाएगा। वाह ! क्या उपाय निकाला है राधा ने, क्यों सरला की माँ ?

जमना : हाँ बात है भी ठीक। माँ तो व्यर्थ में रोड़ा अटका रही हैं।

राम : और यह भी मैं कह दूँ कि···

आवाज : श्याम···श्याम···

श्याम : माँ आ गई है।···(उच्च स्वर से) आया (धीरे से) विम्मी की चारपाई छोड़ दो। माँ को न कहना कि मै बुलाने आया था।

सब उठते हैं ! विम्मी का विस्तर ठीक करते हैं। श्याम बाहर जाता है। सब यथा-स्थान ठीक होकर बैठ जाते हैं। श्याम और माँ विम्मी को सहारा देने लगते हैं। पीछे विरजू दवाई उठाए आता है। विम्मी को चारपाई पर लिटाते हैं। जमना और राम माँ के पांव छूते हैं। माँ आशीर्वाद देती है, विम्मी की चारपाई पर बैठती है। विरजू चला जाता है।

माँ : ओहो ! आज तुम सवेरे-सवेरे कैसे आए हुए हो ?

राम : कई दिन हो गए थे विम्मी को देखे हुए, सोचा जाकर देख ही आएँ। कैसी तबीयत है अब इसकी ?

माँ : ऐसे ही है। कोई विशेष फर्क नहीं।

जमना : मैंने कई बार कहा है कि अंग्रेजी इलाज कीजिए, आप तो चाननराम को ही भगवान समझे हुई हैं।

माँ : नहीं···वैसे सियाना भी है।

राम : क्या कहा है उसने आज ?

माँ : कहता है, आराम आ रहा है।···धीरे-धीरे ही आएगा।

जमना : कहाँ आ रहा है आराम ?

राम : क्यों विम्मी, तुम क्या महसूस करती हो ?

विमला : मुझे तो कोई विशेष आराम महसूस नहीं होता।

श्याम : ये डाक्टर-वैद्य तो ऐसे ही कह देते हैं।

राधा : उसका जो इलाज हुआ। उसने तो कहना ही है कि आराम आ रहा है।

माँ : भई, बीमारी घर कर गई है, धीरे-धीरे ही तो जाएगी। अंग्रेजी डाक्टर कोई जादू थोड़े ही कर देंगे।

जमना : यही तो आपकी बातें हैं। दवाई-दवाई में भी अंतर होता है।

श्याम : मेरा भी यह विचार है कि इसका अंग्रेजी इलाज ही कराओ। वैद्य को तो तुम देख ही चुकी हो इतना समय। अब कुछ दिन अंग्रेजी दवा भी कर देखो, क्या हर्ज है?

माँ : नहीं, आज उसने दवाई बदली है।

विम्मी को दवाई देती है।

जमना : उसके दवाई-ववाई बदलने से कुछ न होगा।

राधा : पर इनका विश्वास जो उस पर है!

राम : विश्वास-विश्वास को छोड़ो। इसे किसी अच्छे डाक्टर को दिखाओ। मेरे मित्र हैं डाक्टर गुप्ता, कहो तो उनको ले आऊँ एक दिन। बड़ा योग्य डाक्टर है।

माँ : फीस भी तो लेगा!

राम : फीस क्या विम्मी से ऊपर है? तुम फीस की चिन्ता मत करो। यदि तुम्हें उसका डर है तो तुम मत देना, बस।

माँ : अच्छा। आज उसने दवाई बदली है, दो-एक दिन इसको देख लूँ।

जमना : फिर वही बात…

राम : कोई हर्ज नहीं, वेशक देख लो। फिर मुझे सूचित कर देना।

माँ : हाँ।…और सुनाओ सरला-वरला सब बच्चे ठीक-ठाक हैं ?

राम : हाँ ठीक ही हैं।

माँ : वह राजो को भी नहीं लेते आए ?

राम : हाँ, बस ऐसे ही…

माँ : खाना तो नहीं खाकर आए होगे ?

राम : खाकर आए हैं।

माँ : अब घर जाओगे या कहीं और की तैयारी करके आए हो ?

राम : जाना तो था कहीं, पर रुक गए हैं।

माँ : क्यों ?

राम : यहीं आकर सुना है कि आज कोई क्लेम के दफ्तर से इंस्पैक्टर आ रहा है ? तुम अपने-आप तो कुछ कहला भेजती नहीं हो। कोई मिल-मिला जाए, कहीं से कुछ पता चल जाए तो चल जाए।

माँ : कोई विशेष बात होती तो कहला भेजती।

राम : क्यों ? अभी यह विशेष बात भी नहीं है ? हम तेरह साल से क्लेम की प्रतीक्षा में थूक निगल रहे हैं और तुम कहती हो कोई विशेष बात भी नहीं ?

माँ : अरे कौनसे मिल रहे हैं आज ! वह केवल कुछ पूछ-ताछ के लिए आएगा।

राम : वह जिस बात के लिए आएगा, क्या हमें उसकी

खबर नहीं होनी चाहिए ?

माँ : क्यों नहीं होनी चाहिए, पर कुछ बात भी हो।

राम : फिर कहती हो कुछ बात भी हो। भई क्लेम में हमारा हिस्सा भी तो है। फिर ?

माँ : अभी हिस्से-विस्से की बात ही कहाँ है ?

राम : क्यों ?

माँ : क्यों क्या ? हिस्से का तो अभी प्रश्न ही नहीं है। पहले तो पैसा मिल जाए, यही प्रश्न है।

राम : आज जब पूछने आ रहे हैं तो कल मिल भी जाएगा, फिर तो हिस्सों की बात होगी ?

माँ : हिस्सों की बात फिर भी नहीं होगी।

राम : क्यों ?

माँ : क्यों क्या ? पहले जो बातें सामने हैं उनको निबटाना होगा या हिस्से होंगे ?

राम : कौनसी बातें ? यही बिरजू और बिम्मी का ब्याह ?

माँ : नहीं।'''हाँ यह भी उन बातों में एक है।

राम : और क्या है ?

माँ : और जो घर में इतना ऋण है उसका भी तो निबटारा करना है।

राम : कौनसा ऋण ?

माँ : तुम भूल जाओ तो भूल जाओ, मैं तो नहीं भूल सकती। पहले तुम्हारी बहू की बीमारी पर लिया था। फिर श्याम के ब्याह पर लिया। फिर अब बिम्मी की बीमारी पर भी तो लग रहा है।

जमना : मेरी बीमारी पर क्या लगा था ? लगा होगा यही कोई सौ-दो सौ।

मां : चाहे एक कौड़ी सही पर ऋण तो है ?

जमना : और जो इतनी मुद्दत कमा-कमाकर···

मां : कमा-कमाकर मुझे दिया है ?

जमना : क्यों ?

राम : ठहर, तू चुप कर···

मां : हां बोलो, मुझे क्या दिया है ? जब तक वे रिटायर नहीं हुए थे तब तक तो लेते ही रहे थे। उनके रिटायर होने पर भी तुमने जो कुछ किया अपना, मुझे क्या दिया ?

जमना : यह तो मुझे पहले ही पता था कि एक दिन किए-कराए पे पानी फिरना है।

मां : जो सच है मैं वह कहूँगी। तुम चाहे कुछ ही कहती रहो।

जमना : सच-झूठ तो अभी दिखाई दे गया।

राम : ठहर, तू चुप कर···

जमना : मैं क्यों चुप करूँ···वह···

राम : मैं जो कह रहा हूँ तू चुप कर।

जमना : किए-कराए पर पानी फिर जाए और मैं चुप करूँ ?

राम : चल तू न कर चुप। या तू बात करेगी या मैं करूँगा। तू ही करना चाहती है तो कर, मैं नहीं बोलूँगा।

जमना : यही तो तुम्हारी बातें हैं।

राम : फिर बोलती जाएगी, चुप नही होगी ।

विमला : माँ ! शोर मत करो।...लड़ो नही, मेरे दिल को कुछ होता है ।

माँ : लड़ाई कहाँ हो रही है ? बात तो होनी है ।

विमला : धीरे से करो ।

माँ : अच्छा (राम से) देख राम, धीरे-से बात करोगे तो कुछ मैं भी सुन सकूँगी कुछ तुम भी समझ सकोगे ।

राम : हाँ...हाँ...कोई लड़ाई थोड़े करनी है ।

माँ : बोलो, अब क्या कहते हो ?

राम : सुन माँ ! मैं यह कहता हूँ कि जो हमारी बीमारी पे खर्च हुआ है वह तो कुछ गिनती में है नही । सौ-दो सौ की क्या गिनती ? अब जो विम्मी पर खर्च हो रहा है उसके साथ हमारा कोई मतलब नहीं ।

माँ : क्यों ?

राम : विम्मी हमारे इस घर से जाने के बाद ही बीमार हुई है न ? फिर हमारा घर में क्या मतलब रहा ?

माँ : जब घर के क्लेम में तुम्हारा हिस्सा है तो खर्च में तुम्हारा हिस्सा क्यों नहीं ? लाभ में हो तो हानि में भी होना पड़ेगा। यह भी तुम तीनों के सिर है, मैं कहाँ से लाऊँगी ?

राम : क्यों, तुम अपना हिस्सा जो लोगी, वह किस काम आएगा ?

माँ : तुम क्या समझते हो कि वह मुझे खाने को मिल

जाएगा ? तुम्हारे पिताजी जो बोझ ढोने को छोड़ गए हैं, उसे भी तो ढोना है ?

राम : तुम्हारा मतलब बिम्मी के ब्याह से है ?

माँ : बिम्मी का ब्याह है, बिरजू का ब्याह है। बिरजू की पढ़ाई है, बिम्मी की बीमारी है।···

राम : बिरजू का भी तो हिस्सा होगा ?

माँ : तुम क्या समझते हो, यह सारे काम केवल मेरे ही हिस्से से पूरे हो जाएँगे ? ···मुझे एक बात का उत्तर दो···तुम्हारा और श्याम का ब्याह कहाँ से हुआ ? घर से हुआ न। तुमने तो उसमें एक भी पाई नहीं दी थी न ?

राम : अच्छा·· फिर ?

माँ : जब तुम दोनों का ब्याह घर से हुआ है तो क्या इन दोनों का ब्याह घर से न होगा ?

राम : हो !

माँ : हो, तो कहाँ से हो ? मेरे पास कोई सोने की ईंट तो नहीं रखी जो सबका ब्याह होता जाएगा।

राधा : हमारा ब्याह का ऋण भी तो हमारे सिर मढ़ा जा रहा है।

माँ : कहाँ मढ़ा जा रहा है ? क्लेम का पैसा घर का पैसा है, उससे घर की जितनी जिम्मेदारियाँ शेष हैं वे ही पूरी की जाएँगी; फिर हिस्से की बात होगी।

राम : फिर बचेगा क्या ?

माँ : चाहे कुछ बचे।

जमना : दो साल हमें अलग हुए हो गए। कसम है, जो हमने

घर से फूटी कौड़ी भी ली हो !

माँ : ली नहीं तो दी क्या है ?

राधा : आपने नही ली, तो हमने कौनसी ली है ?

माँ : अब तो किसी ने कुछ नहीं लिया।

राम : सुन माँ ! पैसे की किसे आवश्यकता नहीं ? मुझे बिजनेस के लिए पैसा चाहिए और श्याम को आगे पढ़ने के लिए। हिस्से तो तू देना कर। बाकी रही ऋण और दोनों के ब्याहों की बात, वह तुम्हारा और बिरजू का दो हिस्से होंगे ही।

माँ : दो से क्या होगा ? चार हिस्से करने से आएगा क्या केवल दो-दो हजार रुपया ? तो मैं चार हजार से क्या करूँगी ? तीन हजार के लगभग तो ऋण ही निकल जाएगा। बाकी एक हजार से दोनों का व्याह करूँगी, बिरजू को पढ़ाऊँगी या विम्मी की बीमारी पे खर्च करूँगी ?

राम : वह ठीक, पर अभी जो सामने है, वह है ऋण और विम्मी की बीमारी। फिर दोनों के व्याह के समय हम भी तो रहेंगे, कही भाग थोड़े जाएँगे।

माँ : वाह ! सब बाँटकर मैं क्या पीपल की छाँह में बैठूंगी ? अभी इतना कुछ कह रहे हो, तब तुम मेरी बात सुनोगे ? मुझे भिखारिन बनाना चाहते हो ? अपने पिता के मान को मिट्टी में मिलना चाहते हो, तो तुम्हारी मर्जी।

श्याम : एक बात और है, यदि हम सबके अलग-अलग हिस्से करना है, तो हो सकता है कुछ लाभ भी

हा।

राम : हाँ, बेशक। उस प्रकार से सबको तीन-तीन हजार मिलेगा और चार हजार का लाभ होगा।

माँ : पहले भी इतनी देर हो गई है, कोई और गड़बड़ करोगे तो तीन-चार साल और लग जाएँगे, फिर मुझे विधवा होने से ही शीघ्र मिलेगा।

राधा : एक बात मैं कहूँ?

राम : कहो···

माँ : तुम भी कहो···

राधा : हिस्से तो दो कर, बाकी इन दोनों के ब्याह की बात है, वह हम कुछ न कुछ मासिक देते रहेंगे।

माँ : न। अब तक क्या मासिक दिया है, जो अब दोगे?

जमना : तो मतलब यह है कि हमें हिस्सा नहीं मिलेगा?

माँ : तुम्हें क्या, किसी को नहीं मिलेगा।

जमना : सीधी तरह से क्यों नहीं कहते कि नीयत ठीक नहीं।

माँ : ऐसे ही समझ लो। सुन ले राम, यह अब नीयत-बीयत भी सुनाने लगी है।

जमना : हां जिसे पीर होगी, वह चिल्लाएगा ही।

माँ : मेरी नीयत ठीक नहीं, तुम्हारी तो ठीक है, तुम्हारे माँ-बाप की तो ठीक है।

जमना : देख लो। मेरे माँ-बाप ने कौनसा तीर चुभोया है!

माँ : तीर चुभोएँ वह अपने को, देख लिया राम!

जमना : उनको चुभोएँगे जिनकी नीयत में पत्थर हैं।

मां : उनकी अपनी आँखें फूट तो नहीं गईं। देख रहे हो न, जोर से लड़ाई लड़ रही है।

जमना : आँखें तो···

राम : चल चुप भी कर, बके ही जाएगी, शर्म नहीं आती !

जमना : शर्म क्या आए···

राम : किसी छोटे-बड़े का मुंह भी देखेगी या नहीं, हर समय तुम्हारी यही बात है। मैं अकेला ही आता तो अच्छा होता।

जमना : यही तो तुम्हरी बातें हैं।

विम्मी : माँ, शोर मत करो। दे दो, सब इनको दे दो। मुझे लड़ाई नहीं चाहिए।

माँ : ऐसे ही दे दूं !

जमना : चाहे कुछ हो, मैं अपना हिस्सा लेकर ही रहूँगी !

माँ : हिस्सा-विस्सा मैं किसी को देने को तैयार नहीं।

राधा : ऐसा हो ही नहीं सकता।

माँ : हो क्यों नहीं सकता ? ऐसा ही होगा।

राधा : यह किसी के बस में नहीं, हिस्सा सबका है।

जमना : चाहे जिसके बस में हो, मैं अपना हिस्सा नहीं छोड़ूंगी, मैं कहे देती हूँ।

माँ : कहती रहो, कहने से क्या होता है ?

विम्मी : माँ !

माँ : (चिढ़कर) क्या है ? तुम अपना आराम से सो रहो !

विम्मी : सोऊँ कहाँ से, लड़ाई में भी कभी आराम होता है ?

तू सब कुछ दे क्यों नहीं देती ?

माँ : (उपेक्षा से) अच्छा · अच्छा···।

राम : सुनो माँ ! बात वही होनी चाहिए, जिससे अड़ोस-पड़ोस वालों को हँसने का अवसर न मिले और सब की बात भी बन जाए।

माँ : बोलो···

राम : मैं कहता हूँ···।

बिरजू : (भागता हुआ आकर) माँ···माँ, इंस्पैक्टर आ गया है।

माँ : आ गया है ?

सबमें हलचल मच जाती है। सब ठीक होकर बैठ जाते हैं। माँ खड़ी होकर दरवाजे की ओर जाती है। इंस्पैक्टर प्रवेश करता है—पैंट-कोट, हैट पहने अधेड़ उम्र व्यक्ति जिसके बाएँ हाथ में फाइलों का पुलंदा है।

राम : (खड़ा होकर) आइए···पधारिए।

कुर्सी की ओर संकेत करता है।

इंस्पैक्टर : (कुर्सी पर बैठकर फाइल खोलकर) श्रीमती लीलादेवी ?

माँ : मैं हूँ।

इंस्पैक्टर : हूँ ! आप ही हैं श्री मनोहरलाल की धर्मपत्नी ?

माँ : जी हाँ।

राम : जी हाँ, यही हैं।

इंस्पैक्टर : हूँ ! वह क्लेम आप ही ने किया है ?

मां : जी हां, मैंने ।
इंस्पैक्टर : और श्री रामलाल ?
राम : मैं हूँ ।
इंस्पैक्टर : श्री श्यामलाल ?
श्याम : मैं हूँ ।
इंस्पैक्टर : श्री व्रजलाल ?
राम : (बिरजू की ओर संकेत करके) यह है ।
इंस्पैक्टर : (मां से) ये तीनों आपके लड़के हैं ?
राम : जी हां । मैं बड़ा हूँ, (श्याम की ओर संकेत करके) यह मुझसे छोटा है और (बिरजू की ओर संकेत करके) यह सबसे छोटा है ।
इंस्पैक्टर : ठीक । आप सब यहां मिल गए । अच्छा साब ! आप यह क्लेम किस प्रकार लेना चाहेंगे ?
सब : जी ?
इंस्पैक्टर : अ्…मेरा मतलब है कि यह क्लेम आप इकट्ठा लेना चाहेंगे या अलग-अलग ?
सब : जी…यह्…
इंस्पैक्टर : कहने का मतलब यह है कि यदि यह क्लेम आपकी माताजी को दिया जाए तो आपको कोई आपत्ति तो नहीं ?
राम-श्याम : जी ?
इंस्पैक्टर : जी हां, यही बात आपसे पक्की करानी है, ताकि बाद में आपको कोई आपत्ति न रहे ।
राम : जी…
इंस्पैक्टर : सोच लीजिए…

राम : जी हाँ, सोचना तो पड़ेगा ही।

जमना : (धीरे से) कहते क्यों नहीं कि हम अलग लेना चाहते हैं।

इंस्पैक्टर : जी ?

राधा : (धीरे से श्याम से) यह तो पूछो, अलग से लाभ रहेगा ?

श्याम : जी, एक बात बताने की कृपा करेंगे ?

इंस्पैक्टर : पूछिए…

श्याम : यह बताइए कि अलग हिस्से करवाने से क्या हमें कुछ लाभ होगा ?

इंस्पैक्टर : जी…?

माँ : जी, मेरा विचार तो यह है कि इकट्ठा रहने से क्या शीघ्र नहीं मिल जाएगा ? फिर मैं विधवा हूँ, वैसे भी नम्बर शीघ्र आएगा।

राम : यदि अलग में कुछ लाभ हो तो नम्बर आगे-पीछे की कोई चिन्ता नहीं।

इंस्पैक्टर : जी यहाँ किसी प्रकार भी कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। न इकट्ठा लेने से पैसे कम मिलेंगे, न अलग लेने से कोई देर ही होगी। मामला दोनों ओर से बराबर ही रहेगा।

माँ : फिर इकट्ठा ही रहने दीजिए।

जमना : नहीं अलग-अलग ही ठीक है। (राम से) तुम क्यों नहीं कहते ?

राम : जी हाँ, इस झंझट से तो अलग ही कर दीजिए।

श्याम : जी हाँ, यही ठीक है।

मां : नहीं साब, इकट्ठा ही ठीक है।

इंस्पैक्टर : देखिए, यदि आपके लड़के इकट्ठा नहीं लेना चाहेंगे तो आपकी एक न चलेगी। उसके हिस्से कर दिए जाएँगे।

राम-श्याम : बस ठीक है।

मां : और यदि मैं अलग न लेना चाहूँ तो ?

इंस्पैक्टर : तो हाँ, फिर भी अड़चन पड़ सकती है। फिर यह होगा कि पैसा कुछ देर के लिए रुक जाएगा, जब तक कि आप सबका एक निर्णय न हो जाए।

राम : मां! तुम मान क्यों नहीं जातीं ? तुम्हें क्या कष्ट है ? तुम्हें तुम्हारा हिस्सा मिलेगा, बिरजू का भी मिलेगा, बस !

मां : इकट्ठा लेने में क्या हर्ज है ? तुम क्यों नहीं मान जाते ?

श्याम : हम तो केवल अपना हिस्सा माँगते हैं। हमें अपने भविष्य का भी कुछ सोचना है कि नहीं ?

मां : और मैं जो घर का सोच रही हूँ वह क्या बुरा है ? घर का भविष्य अच्छा होगा तो तुम्हारा अपने-आप अच्छा हो जाएगा।

जमना : हम तो अपना हिस्सा अलग अवश्य कराएँगे। बिजनेस में हर समय पैसे की आवश्यकता पड़ती है, (राम से) क्यों जी, कहते क्यों नहीं ?

राम : कह तो रहा हूँ। अलग ही ठीक है।

राधा : अपना हिस्सा तो मैं भी नहीं जाने दूँगी चाहे कुछ हो जाए''' (श्याम से) क्यों जी, बोलो न ?

श्याम : बोल तो रहा हूँ। हाँ, अलग ठीक है।

माँ : देखिए जी ! चाहे कुछ हो जाए, यह मानें चाहे न मानें, पैसा तो मैं इकट्ठा ही लूंगी, नहीं तो नहीं लूंगी।

जमना : हाँ, दूसरे की दो फूटें; चाहे अपनी एक फूट जाए, उसकी चिन्ता नहीं।

राधा : हाँ···और···

इंस्पैक्टर : सुनिए साहब, आपमें से कोई भी नहीं मान रहा। सो आपको दफ्तर में पेश होना पड़ेगा।

राम : बस ठीक है, हो जाएँगे पेश।

इंस्पैक्टर : मैंने आपकी बातें सुनी हैं। मुझे हैरानी है कि आप इतनी साधारण-सी बात पर इतना झगड़ रहे हैं।

श्याम : वाह साहब ! यह साधारण-सी बात है ?

राम : इसी बात पर तो हमारा जीना-मरना निर्भर है।

इंस्पैक्टर : (मुस्कराकर) खैर, आपकी इच्छा है, मेरा तो विचार है आपको झगड़ना नहीं चाहिए।

श्याम : इंस्पैक्टर साहब, आप ही कोई रास्ता बता दीजिए।

इंस्पैक्टर : यदि मेरा मन पूछते हैं तो मैं कहूँगा कि उसके हिस्से न करवाइए, व्यर्थका झंझट मोल लेना है। आपको वहीं बुलवाएँगे, आपके बयान होंगे, पेशी होगी, सौ झंझट होंगे।

माँ : हाँ ! इसीलिए तो मैं कहती हूँ इकट्ठा होना चाहिए।

राम : झंझटों की कोई परवाह नहीं। झंझट हम भोगेंगे

तो थैलियाँ भी तो हमें ही मिलेंगी। फिर सारा जीवन तो सुखी रहेगा।

इंस्पैक्टर : (मुस्कराकर) मेरा विचार है, आप भूल कर रहे हैं।

श्याम : वाह साहब, आप भी उनकी वकालत करने लगतो हमारा क्या होगा !

राम : इंस्पैक्टर साब ! हमने सब सोच लिया है, आप अलग ही कर दीजिए।

इंस्पैक्टर : चलो जैसे आपकी इच्छा— (कागज निकालकर) लीजिए साहब, आप यहाँ लिख दीजिए कि हमें आपत्ति है और अपने हस्ताक्षर भी कर दीजिए।

माँ : नहीं नहीं। मैं अलग नही करने दूंगी।

राम और श्याम जल्दी से लिखते हैं।

इंस्पैक्टर : मैं क्या कर सकता हूँ माताजी ! ···अ् और ब्रज-लाल ?

राम : यह माँ के साथ रहेगा।

इंस्पैक्टर : चलो, अब आपको वहीं दफ्तर में आकर फार्म भरना होगा।

फाइल बांधता है।

राम : कब ?

इंस्पैक्टर : इसी सोमवार को।

श्याम : जी एक बात है। पेश कहाँ होना पड़ेगा ?

राम : अरे यह भी कोई पूछने की बात है ? वहीं क्लेम के दफ्तर, जाम नगर हाऊस में, क्यों साब ?

इंस्पैक्टर : (हँसकर) आप शायद हर बात को समझने में भूल

कर रहे हैं। मैं क्लेम के दफ्तर से नहीं आया। मैं डाकखाने का इंस्पैक्टर हूँ। आपके पिता श्री मनोहरलाल जी का डाकखाने में कुछ हिसाब था।

सब इंस्पैक्टर का मुंह देखते हैं।

मां : जी हाँ, था।

इंस्पैक्टर : उस हिसाब में से कुछ रुपये बचते थे। जिसका आपने क्लेम किया था!

मां : जी हाँ, मैंने अर्जी दी थी।

इंस्पैक्टर : जी हाँ, उसी की पड़ताल के लिए मैं आया हूँ। इसी लिए तो मैं कह रहा था हिस्से कराने की आवश्यकता नहीं, रुपये केवल पच्चीस हैं।

राम-श्याम : जी···?

जमना-राधा : केवल पच्चीस रुपये ?

इंस्पैक्टर : जी हाँ···

राम : आपने पहले क्यों नहीं बताया ?

इंस्पैक्टर : आपने मुझे कुछ कहने का अवसर ही कब दिया ?

राम और श्याम एक-दूसरे का मुंह देखते हैं।

: अच्छा साहब ! सोमवार को अवश्य तशरीफ लाइएगा। अच्छा मुझे आज्ञा दीजिए, नमस्ते।

प्रस्थान।

राम-श्याम : सुनिए···

पटाक्षेप

कथानक की खोज

हमारे आसपास इतने कथानक बिखरे पड़े हैं जो प्रतिपल, प्रतिक्षण अपने आप बनते और बिगड़ते रहते हैं। यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से विचार करें तो हमारे जीवन में, हमारे परिवार में, हमारे आसपास के वातावरण में अनेक घटनाएँ ऐसी घटती हैं जो कहानी और नाटक का रूप धारण कर सकती हैं। प्रस्तुत नाटक में इसी दिशा की ओर संकेत है।

शरद जोशी

[जगदीश्वर शर्मा का शयन एवं अध्ययन कक्ष (Bed come study-room)। सामने दो पलँग जुड़े हुए पड़े हैं जिन पर साफ-सुथरे बिछौने बिछे हैं और दो बच्चे सोए हैं। (बड़ा बच्चा : लड़की—तीन वर्ष और छोटा बच्चा : लड़का—एक वर्ष) पीछे एक छोटी मेज है, जिस पर बच्चे के दूध पीने की बोतल, एक काँच का गिलास, एक चम्मच और कुछ शीशियाँ पड़ी हैं। दायी ओर आगे को एक बड़ी मेज है, जिस पर कुछ पुस्तकें, कुछ कागज और अन्य लेखन-सामग्री के अतिरिक्त एक टेबल लैम्प पड़ा है, जिसके साथ एक बुक-शैल्फ है, जिसमें पुस्तकें सजी हैं। बायी ओर एक सिंगार मेज है, साथ मे अलगनी पर तौलिया टँगा है। कोने में दरवाजा है, जो दूसरे कमरे मे खुलता है। कुछ कुर्सियाँ यथास्थान पड़ी हैं।

पर्दा उठता है और यह सारा दृश्य दिखाई देता है। नाटककार जगदीश्वर शर्मा अध्ययन की मेज के सामने कुर्सी पर बैठा लैम्प के प्रकाश मे किसी पुस्तक का गम्भीरता से अध्ययन कर रहा है और कुछ सोचकर नोट भी करता जाता है। दूसरे कमरे से संतोष प्रवेश करती है। ऐसे लग रही है जैसे कही जाने की तैयारी में है। शृंगार मेज के सामने खड़ी होकर अपने बालों, मुख और कपड़ों को सँवारती है।]

सन्तोष : (वहीं से) मैंने कहा…खाना खाना हो तो ले आऊँ?

जगदीश्वर : (बिना देखे) क्या टाइम है?

सन्तोष : (अपनी कलाई देखकर) आठ बज गए हैं।

जगदीश्वर : अभी आठ ही बजे हैं! …अच्छा पहले सब काम समेट लो, फिर खा लूँगा।

सन्तोष : सब समेट चुकी, बाकी केवल आपने खाना खाना है। मैं खा चुकी हूँ, बच्चे दूध पी चुके हैं। बर्तन-वर्तन धोकर रसोई का काम समेट चुकी हूँ।

जगदीश्वर : समेट चुकी तो ले आओ खाना।

सन्तोष जाकर शीघ्र खाना लाती है।

सन्तोष : (आकर) यह लो खाना।

जगदीश्वर : (विस्मय से देखकर) आज क्या बात है? कैसी तूफ़ान मेल चला दी? क्या पहले ही से खाना परोस रखा था? (ऊपर से नीचे तक देखकर) क्या कहीं जाने का विचार है?

सन्तोष : (मुस्कुराते हुए) जाने देंगे तब न?

जगदीश्वर : (खाना खाते हुए) अरे! क्या सचमुच कहीं जाने का विचार है? रात को कहीं जाओगी?

सन्तोष : रामलीला देखने।

जगदीश्वर : रामलीला? अरे वह तो सात बजे समाप्त हो जाती है। अब तो झाँकियाँ वापस लौटने वाली होंगी। क्या वही देखने जा रही हो?

सन्तोष : नहीं…नाटक…!

जगदीश्वर : नाटक?…अ्…रामलीला का नाटक? कहाँ हो

रहा है ?

सन्तोष : दिल्ली गेट पे।

जगदीश्वर . दिल्ली गेट पे ? मुझे तो पता नहीं !

सन्तोष : आपको अपने लिखने-पढ़ने से समय मिले तो दुनिया का पता भी चले।

जगदीश्वर : (हँसकर फिर चौंककर) अरे हाँ, याद दिलाया। एक नाटक लिखकर रेडियो स्टेशन भेजना है। पत्र आया हुआ है और मैं लिख ही नहीं सका हूँ।··· कल अवश्य लिखना होगा।···अच्छा है···किसके साथ जा रही हो ?

सन्तोष : एक तो अपनी मकान मालकिन ही जा रही है और गली में और भी तैयार है।

जगदीश्वर : क्या फ्री है ?

सन्तोष : नहीं पास है।

जगदीश्वर : कहाँ है ? तुम्हें कहाँ से मिला पास ?

सन्तोष : मकान मालकिन से। उन्हें पच्चीस पास मिले हैं। पता है उन्होंने नाटक मण्डली को पाँच सौ रुपये दिए हैं।

जगदीश्वर : पाँच सौ रुपये ! कमाल है !

सन्तोष : तो फिर बोलिए !

जगदीश्वर : जब सारी योजना तैयार है, तो मैं कैसे रोक सकता हूँ।

सन्तोष : नहीं, ऐसी बात नहीं। आप यदि नहीं भेजेंगे, तो नहीं जाऊँगी।

जगदीश्वर : (हँसकर) जब सब तैयारी हो चुकी है तो···

सन्तोष : तो जाऊँ ?

जगदीश्वर : जाइए देवी।...पर हाँ, इन दोनों लँगूरों का क्या होगा ?

दोनों बच्चों की ओर संकेत करता है।

सन्तोष : दोनों सोते रहेंगे। दूध मैंने दोनों को पिला दिया है।

जगदीश्वर : यदि इनमें से कोई जाग गया तो ?...मैं परेशान हो जाऊँगा। मुझसे यह मुसीबत नहीं होगी। इन दोनों को साथ लेती जाओ।

सन्तोष : दोनों को कैसे लेती जाऊँगी ?

जगदीश्वर : अच्छा यूँ करो...अ...

सन्तोष : अब यह जागते नहीं, सोते ही रहेंगे।

जगदीश्वर : मेरी बात सुनो...डॉली का तो मुझे पता है, वह सोई तो फिर सवेरे ही उठेगी। पर पपला, यह तो पूरा मच्छर है। डॉली यदि जाग भी जाए तो उसे डरा-धमकाकर, प्यार से सुला सकता हूँ और नहीं तो इधर-उधर की गप्पें सुनाकर उसे बहला सकता हूँ। पर यदि यह हजरत छोटूराम जाग गए तो इनको न डरा सकता हूँ, न धमका सकता हूँ और ना ही इधर-उधर की बातें करके बहला ही सकता हूँ।

सन्तोष : निप्पल पड़ा है, उसके मुँह में दे देना। सो जाएगा।

जगदीश्वर : भई मुझसे यह निप्पल-विप्पल की मुसीबत नहीं होती...

सन्तोष : तो अच्छा, मैं नहीं जाती...और क्या...?

जगदीश्वर : ओहो ! ···सुनो, एक तो ले जा सकती हो ? सो पपले को ले जाओ । डॉली सोई रहे, बस !

सन्तोष : अच्छा···अच्छा तो मैं चलूँ···

मुन्ने को उठाने लगती है।

जगदीश्वर : बस ? चल दीं । यह लो बर्तन, पानी दो ।

सन्तोष : यह पड़ा गिलास ।

जगदीश्वर : पहले ही से भर कर रख छोड़ा है ? कमाल है ? जाने की इतनी जल्दी है ।

दोनों हँसते है ।

सन्तोष : अभी उनको बुलाना है, वे सब तैयार हैं, मैं केवल आपसे पूछने के लिए रुकी हुई थी ।

जगदीश्वर : तो फिर जाइए देवी जी ।

सन्तोष : अच्छा ! तो किवाड़ अन्दर से बन्द कर लीजिए, खुला न छोड़ना ।

जगदीश्वर : लो, मैं अभी बन्द कर लेता हूँ ।

सन्तोष लड़के को उठाकर जाती है और जगदीश्वर किवाड़ बन्द करता है।

जगदीश्वर : (लम्बी निश्वास छोड़कर) हा···हा···ह्, चली गईं। डॉली तो गहरी नीद में है । यह तो अब नही उठने की ।···ओह ! कितना सन्नाटा छा गया है ! कैसी खामोशी है ! मैं भी [illegible]ऊँ ? अभी तो साढ़े आठ बजे हैं ।···ब[illegible] ठी[illegible] अच्छा समय और [illegible] मिलेगा ? दिन में [illegible] से

कभी कोई झंझट, कभी कोई समस्या !…अब कितनी शांति है। अपने आप मूड बनता है।…ठीक है। नाटक लिख डालना चाहिए…!

अध्ययन मेज के आगे कुर्सी पर बैठकर लिखने के लिए कागज और पेन सँभाल लेता है।

: हूँ।…क्या लिखूं, प्लाट तो कोई सोचा नहीं ?… अ्…हाँ !…अ्…नहीं…अ्

किवाड़ खटखटाने की आवाज।

: अ्…कौन है ?

फिर किवाड़ खटकना।

: अ् कौन है भाई, ठहरो किवाड़ खोलता हूँ।

किवाड़ खोलता है।

जगदीश्वर : कौन, पुष्पा ! क्यों, क्या बात है ?

पुष्पा : मेरी माँ कहती है, कि एक पास रामलीला का हो तो दे दो। मेरी मौसी आई हैं वह देखने जाएँगी।

जगदीश्वर : पास ? भई मुझे तो पास-वास का कुछ पता नहीं !

पुष्पा : आंटी कहाँ है ?

जगदीश्वर : वह तो चली गई…

पुष्पा : कहाँ ?

जगदीश्वर : रामलीला देखने।

पुष्पा : चली गई ? अच्छा…

जाती है। जगदीश्वर किवाड़ बन्द करता है।

जगदीश्वर : हूँ…अ्…पेन कहाँ गया, अ् यह रहा ! हाँ तो मैं क्या लिख रह था ?…अ् अरे लिख कहाँ रहा

था ?···अभी तो सोच रहा था।···हाँ कोई प्लाट सोच रहा था। हाँ कौन-सा प्लाट होना चाहिए। धार्मिक···या ऐतिहासिक ? धार्मिक ठीक नहीं, ऐतिहासिक ही ठीक है। ऐतिहासिक···मुगल काल से···या हिन्दू काल से ? राजपूत, या मराठा युग से···महाराणा प्रताप···नहीं-नहीं शिवाजी ? यह भी कोई नया विषय नहीं। मुगल काल से··· शाहजहाँ, ताजमहल जहाँगीर का न्याय··· ऊँहूँ। इनपे बहुत कुछ लिखा जा चुका है। कोई नया कथानक होना चाहिए। इतिहास से लेना तो उन घटनाओं को दोहराना मात्र है। कथानक कोई नया, आज के युग का होना चाहिए। हाँ, अ्··· क्या है ?·· हाँ ··

किवाड़ खटकने की आवाज होती है।

: ओ···कौन आया इस समय···कौन है भाई ?

स्त्री आवाज : सन्तोष···सन्तोष···

जगदीश्वर : कौन ?···ठहरिए, किवाड़ खोलता हूँ।

किवाड़ खोलता है।

पद्मा : सन्तोष को भेजिए।

जगदीश्वर : वह तो कभी की चली गई।

पद्मा : चली गई ? अच्छा।

जगदीश्वर : आपको नहीं मिली ?

पद्मा : ठीक है, पहुँच गई होगी। मैं तो जरा राज की माँ को बुलाने गई थी। अच्छा किवाड़ बन्द कर लीजिए।

जगदीश्वर किवाड़ बन्द करता है।

जगदीश्वर : ओह्...रामलीला का इतना शौक? सारी गली ही देखने चली है। हूँ (मुस्कराकर) स्त्रियों की सदा भेड़चाल रही है। एक जहाँ जाएगी सभी वहीं भागेंगी।...पर भीमसेन तो मर्द है, उसे क्या हो गया है? पाँच सौ रुपया रामलीला में दे दिया।... नौटंकी को पाँच सौ रुपया?...और इधर हमारे नाटक पड़े-पड़े सड़ रहे हैं। मंच के लिए 'फण्ड्स' नहीं हैं, और उधर यह ..? यह पाँच सौ रुपया यदि हमारे ग्रुप को मिलता तो हम कैसी कला प्रस्तुत करते! नौटंकी में क्या धरा है? .. और फिर भीमसेन में कौनसी कला की परख है, जो वह उधर पैसा न देकर हमें पैसा देता...फिर...हमने माँगा ही कब है? यदि हम माँगें तो मना तो नहीं करेगा। मजा आ जाएगा। हूँ (मुस्कराकर) भीमसेन को कला से दूर का वास्ता नहीं। एक कलाहीन से कला के नाम पर पैसा लेना...छी...कला का अपमान है।...हटाओ...हूँ, मैं किस उधेड़-बुन में पड़ गया।...हाँ तो मैं क्या सोच रहा था?... अ् हाँ कथानक?...ठीक है, इन कलाहीन व्यक्तियों पर ही कुछ लिखना चाहिए...ठीक है...ऊँहूँ यह कोई विषय नहीं है?...वि · प...य आज के युग के उपयुक्त होना चाहिए! ...राजनैतिक.. सामाजिक ठीक है। जनता के लिए जनता की ही बात होनी चाहिए।...तो फिर...क्या होना चाहिए? गरीबी

हाँ ठीक ! अमीरी पर व्यंग्य···नहीं···हाँ···

किवाड़ खटकने की आवाज होती है।

: अरे फिर कौन आ गया ?···(फिर खटकटाना)··· ठहरो किवाड़ खोलता हूँ। (किवाड़ खोलकर) हाँ···कहिए ?···

दूधवाला : बीवीजी नहीं हैं ?

जगदीश्वर : क्यों, क्या बात है ? वह रामलीला देखने गई है।

दूधवाला : वह···बीवीजी ने कल अधिक दूध लाने को कहा था ! मैं पूछने आया हूँ कि कितना चाहिए ?

जगदीश्वर : तुम दूध वाले हो ?

दूधवाला : जी हाँ···

जगदीश्वर : कल किसलिए अधिक दूध चाहिए ?

दूधवाला : जी कल नवरात्रे हैं न···

जगदीश्वर : ओ ! ठीक है, कल दो किलो दूध अधिक दे जाना।

दूधवाला : साढ़े तीन रुपये उसके होंगे बाबूजी। बड़ी मुश्किल से लाऊँगा।

जगदीश्वर : साढ़े तीन रुपये ?···अच्छा ले आना, कल बात करेंगे।

दूधवाला : नहीं बाबूजी ! बाद में झगड़ा न हो, मैं पहले कहे देता हूँ। इसीलिए रात को पूछने आया हूँ।

जगदीश्वर : अच्छा, अच्छा, ले आना। जाओ···

दूध वाला जाता है। जगदीश्वर किवाड़ बन्द करता है।

: ओ · ! साढ़े तीन रुपये !...पौने दो रुपये एक किलो के ? कितना भयकर समय है ? कभी यह

दूध दो आने सेर बिकता था और आज···कितनी महँगाई बढ़ गई है ? जनता कितनी परेशान है। दो जून रोटी जुटाना भी कठिन हो गया है। (दीर्घ निश्वास छोड़कर) ओहो···अच्छा यह सब तो चलता रहेगा···अ्···मैं नाटक तो लिखूं। हाँ तो मैंने कौनसा प्लाट सोचा था ?···अ्···अमीरी पर व्यंग्य ?···ऊहूँ···अच्छा नहीं···जनता गरीबों की है। और वही आज के युग में दुखी है। क्या करे ? अभी देखा, दूध पौने दो रुपये किलो।···गरीब आदमी कहाँ से पीए।···दूध क्या सब कुछ महँगा है ? महँगाई ने कमर तोड़ रखी है, सबकी···हाँ··· महँगाई···यह मारा···मिल गया,···महँगाई पर नाटक होना चाहिए। आज का ज्वलंत विषय है। जनता की समस्या है···खूब रहेगा। ठीक है। हाँ तो प्लाट क्या होना चाहिए ? अ्···नहीं,···ऊँ··· हूँ, हाँ···अ् हूँ···न···अ्···हाँ !···

किवाड़ खटकने की आवाज होती है।

: अरे, फिर कौन आ गया ? जरा भी मूड नहीं बनने देते। (जोर से) कौन है ?··· भई मुँह से बोलो···

आवाज : मैं हूँ···

जगदीश्वर : मैं हूँ···? मैं कौन ? अपना नाम बताइए, नहीं तो किवाड़ नहीं खुलेगा।···परेशान कर दिया है !

आवाज : अरे मैं हूँ··· गोपाल ! अब तो दरवाजा खोल···

जगदीश्वर : ओ···गोपाल ?···ठहरो, खोलता हूँ।

किवाड़ खोलता है।

गोपाल : (अन्दर आकर) अबे कम्बख्त, अब हमारे लिए दरवाजा भी नहीं खुलता ! और ऊपर से बकता है—परेशान कर दिया है ।

जगदीश्वर : (कुर्सी आगे करते हुए) अरे क्षमा करना गोपाल, अभी-अभी कितनों के लिए किवाड़ खोल-खोलकर तंग आ चुका हूँ ।

गोपाल : (बैठते हुए) क्यों, भाभी कहाँ है ?

जगदीश्वर : उसी ने तो सारी मुसीबत खड़ी की है ।··· वह देवी जी रामलीला देखने गई हैं ।

गोपाल : और तुम क्या कर रहे हो ?

जगदीश्वर : कर क्या रहा हूँ । कुछ लिखने को सोच रहा था, कि बार-बार किवाड़ खोलने और बन्द करने में सब 'मूड ऑफ' हो गया है ।

गोपाल : और सबसे अधिक ऑफ किया मैंने—क्यों ?

जगदीश्वर : नहीं, नहीं,···वह तो पहले ही ऑफ हो चुका था।··· कहो इस समय कैसे आए ?···

गोपाल : आए···क्या ?···यार···बिजनेस के टूर पर जा रहा हूँ···हरिद्वार, देहरादून···शायद मसूरी भी जाऊँ···

जगदीश्वर : वाह ! ···ठीक है, हो आओ···वैसे तो कभी हरिद्वार गए नहीं, चलो, इसी बहाने सही···कहो कितने का माल हथियाने का इरादा है ?

गोपाल : यही कोई आठ-दस हजार ···।

जगदीश्जर : खूब, फिर जरूर जाओ···।

गोपाल : सो तो ठीक है, पर···तुम्हारे पास आया हूँ ।

जगदीश्वर : क्यों…?

गोपाल : यार, अपना विस्तरवन्द दे दो, …अपना है, वह जरा साले साहब ले गए हैं।

हँसता है।

जगदीश्वर : (हँसकर) कब जाना है ?

गोपाल : शनिवार को !

जगदीश्वर : यानो कल…?

गोपाल : हाँ। जल्दी करो, मुझे और भी काम करने हैं।

जगदीश्वर : भई…वह या तो उधर बड़े ट्रंक में…है या…भई इन सबका पता है श्रीमती जी को…

गोपाल : फिर… ?

जगदीश्वर : घबराओ नहीं। मैं सुबह निकलवाकर तुम्हें पहुँचवा दूँगा।

गोपाल : अवश्य ?

जगदीश्वर : हाँ…हाँ।

गोपाल : पहुँचा देना…अच्छा मैं चलता हूँ !

जगदीश्वर : आए हो तो, जरा बैठो…।

गोपाल : भई, बहुत से काम करने हैं…और फिर तुम्हारा लिखने का मूड क्यों ऑफ करूँ ?

जगदीश्वर : अरे वह तो कभी का हो गया।

गोपाल : (उठते हुए) अच्छा…दरवाजा बन्द कर लीजिए महाशय जी ! (जाते हुए) बिस्तरबन्द भेजना न भूलना !

जगदीश्वर : अच्छा अच्छा… (किबाड़ बंद करके दीर्घ निश्वास छोड़कर) ओह…आदमी कितना उलझा हुआ है ?

एक मिनट की भी फुर्सत नहीं। कितना व्यस्त जीवन है। दौड़ है, दौड़ पैसा कमाने की? विचित्र स्थिति है। हूँ (हँसकर) विषय बुरा नहीं···इस पर भी कुछ लिखा जा सकता है। इस महँगाई के समय में पैसे के बिना कुछ नही। महँगाई···और पैसे को दौड़···हूँ आपस में कितने सम्बन्धित हैं? दोनों को इकट्ठा जोड़ा जा सकता है।···पर···नही अलग-अलग ही ठीक है। दो विषय मिल गए, दो रचनाएँ रची जा सकती हैं। ठीक है···विषय तो मिल गए। अब 'प्लॉट' सोचना है। प्लॉट सोचा तो बस नाटक लिखा गया। नाटक लिखने में कितना समय लगता है? केवल कथानक ढूँढ़ने में ही सारा समय नष्ट होता है। अब तो कथानक ढूँढ़ने में भी देर नहीं लगेगी। विषय तो सामने है, कथानक अपने आप जुड़ता जाएगा। हाँ···कथानक सोचना चाहिए।···अ···मध्यम वर्ग की समस्याओं का दिग्दर्शन कराना चाहिए···अ् ठीक है···महँगाई में क्या परेशानियाँ होती हैं, ···और···और···

किवाड़ खटखटाने की आवाज होती है।

: (खीझकर) अरे फिर कौन आ धमका? यह कम्बख्त लिखने नहीं देंगे। सोचा था रात के शांत वातावरण में खूब मूड बनेगा पर कोई बनने दे तब न!···

फिर किवाड़ खटकने की आवाज होती है।

: (जोर से) कौन है भाई? ···ओहो···ठहरिए

श्रीमान् खोलता हूँ। हाँ···अ् कहिए···अ्···आप कौन हैं?

किवाड़ खोलता है। दरवाजे पर एक महिला खड़ी है।

महिला : (अन्दर आते हुए) जीजाजी नमस्ते।

जगदीश्वर : (हैरान होकर) नमस्ते···कहिए···?

महिला : (सामान रखकर) आपने मुझे पहचाना नहीं?

जगदीश्वर : जी ?···

महिला : मैं आपकी साली लगती हूँ।

जगदीश्वर : जी ?···

महिला : घर ढूँढ़ते-ढूँढ़ते थक गई हूँ।···कहाँ है वह? उसे बुलाइए तो, वह परिचय कराएगी। :

जगदीश्वर : वह तो रामलीला देखने गई है।

महिला : राधा लीला देखने गई है?

जगदीश्वर : राधा लीला नहीं, रामलीला देखने गई है।

महिला : जो हाँ रामलीला—राधा रामलीला देखने गई है?

जगदीश्वर : राधा कौन?

महिला : (हँसकर) अजी जीजाजी घबरा क्यों गए? राधा, मेरी सहेली और आपकी पत्नी।

जगदीश्वर : उसका नाम राधा नहीं, संतोष है।

महिला : (हँसकर) अच्छा···ससुराल का नाम सन्तोष रखा होगा? मैं दो साल के बाद बम्बई से आई हूँ। मुझे क्या मालूम···? उसके मायके का नाम राधा है।

जगदीश्वर : अजी उसके मायके का नाम ही सन्तोष है। और

उसके व्याह को चार साल हो गए हैं, और उसके दो वच्चे हैं।

महिला : (हैरानी से) दो वच्चे हैं?

जगदीश्वर : जी हां, दो वच्चे! एक वच्चा यहीं आपके सामने पलंग पर सोया हुआ है।

महिला : (घबराकर) क्या? ...आपका नाम जगदीश्वर वर्मा नहीं?

जगदीश्वर : जगदीश्वर तो है, पर वर्मा नहीं देवीजी, शर्मा हूं।

महिला : आप शर्मा हैं?

जगदीश्वर : जी हां, आपको कोई आपत्ति है?

महिला : (घबराकर) क्या यह मकान नंवर चालीस नही?

जगदीश्वर : जी नहीं, एक सौ चालीस है।

महिला : क्षमा कीजिए, मुझे चालीस नम्वर में जाना है।

जगदीश्वर : वह पिछली गली में है।...

महिला : (अपना सामान उठाकर) अच्छा छमा कीजिए, गलती हो गई।

महिला जाती है, जगदीश्वर किवाड़ बन्द करता है।

जगदीश्वर : ओ हो! दिमाग चाट गई। वेकार में लोग परेशान करते हैं। ऐसे ही मेरा समय वरवाद किया। अच्छा भला मूड वन रहा था। इतना समय हो गया, अभी तक कथानक ही नहीं सोचा (फिर सोचना) हूँ... क्या सोच रहा था? ...सव भूल गया। ...सवने

आज ही आना था ? कभी कोई पास पूछ रही है, दूध वाला आ रहा है ?…वह गोपाल का बच्चा आ धमका और इन देवीजी ने तो सब बना-बनाया चौपट कर दिया। क्या लिखूं ? अभी तक प्लॉट ही नहीं ढूंढ़ सका। कथानक खोजना भी एक समस्या बन गया है।…हाँ अपना कथानक…हाँ कथानक ही तो है। जब-जब पैन को हाथ लगाया, विचारों को मोड़ा तो झट किसी ने किवाड़ खटखटाए ! हाँ (हँसना)…कथानक…अरे हाँ कथानक ही तो है। सबने ठीक समय पर किवाड़ खटखटाए।… (हँसना) कथानक सोच रहा था, अपने आप कथा-नक बनता गया। क्या खूब ? आज की घटनाओं को यदि ज्यों का त्यों लिख लिया जाए तो सचमुच एक बढ़िया नाटक बन जाए।…वाह ! संतोष का रामलीला जाना तो एक वरदान बन गया। बस ठीक है। इसकोअभी लिख डालना चाहिए।… नाम क्या हो…? क्या खूब…कथानक की खोज… कितना बढ़िया शीर्षक है। बस अब लिखने बैठ जाना चाहिए। क्या समय हुआ है ? अ…साढ़े दस बज गए…वह तो दो बजे से पहले आने की नहीं। ठीक है। दो बजे तक तो एकांकी लिख लूंगा। कथानक मिल गया, संवाद भी तो बने-बनाए हैं। बस लिखने की ही देरी है। अब लिखना शुरू करूँ। ठहरूँ, पहले ताला लगा लूं, अब कोई भी आए, किवाड़ बिल्कुल नहीं खोलूंगा। (ताला उठाकर

किवाड़ को लगा देना) हां अब ठीक है, कहां गया मेरा पेन···अ् यह रहा···और यह रहे कागज···हूं ···शीर्षक···कथानक···की खोज···।

पटाक्षेप

शायद वे आए हैं

एक माँ को अपने पुत्र का घर बसाने की कितनी लालसा होती है चाहे वह (पुत्र) इस योग्य हो अथवा नहीं, माँ उसके लिए एक अच्छा घर ढूँढ़ने का प्रयत्न करती है । माँ उसके लिए हर प्रकार के उचित एवं अनुचित तरीके अपनाने को तैयार रहती है। प्रस्तुत नाटक में अपने पुत्र की सगाई के लिए एक माँ की लगन और तड़प की झलक है।

पात्र

पं० हरिहर—एक साधारण ब्राह्मण, (आयु ५५ वर्ष)
परमेश्वरी—हरिहर की पत्नी (आयु ५० वर्ष)
विद्याभूषण (भूषी)—हरिहर का लड़का (आयु ३२ वर्ष)
जगदीश (दीशू)—हरिहर का छोटा लड़का (आयु १६ वर्ष)
मालती—हरिहर की लड़की ((आयु २० वर्ष)
रामनारायण—हरिहर के यजमान का संबंधी (आयु ४५ वर्ष)
राधा—रामनारायण की पत्नी (आयु ४० वर्ष)

[एक छोटा-सा कमरा, बायीं ओर दीवार में एक दरवाजा बाहर को खुलता है और दायीं ओर एक दरवाजा दूसरे कमरे या रसोई आदि में खुलता है। बायीं ओर सामने वाली दीवार के कोण में कुछ ट्रंक एक-दूसरे के ऊपर रखे हैं। साथ में एक मेज पड़ी है, जिस पर पुस्तकों का ढेर बिखरा है। अंगीठी पर कुछ खिलौने और फूलदान पड़े हैं। दो चारपाइयाँ बीच में बिछी हैं। एक पर पं० हरिहर और दूसरी पर विद्याभूषण सो रहे हैं। एक ओर दो कुर्सियाँ भी पड़ी हैं।

पर्दा उठता है तो यह सब वस्तुएँ यथास्थान दिखाई देती हैं। सहसा परमेश्वरी का प्रवेश [illegible] शरीर जो मैं
धोती से ढका है। हाथ में पु [illegible] चेहरे पर है
मिश्रित चिंता के भाव हैं।]

[एक छोटा-सा कमरा, बायीं ओर दीवार में एक दरवाजा बाहर को खुलता है और दायीं ओर एक दरवाजा दूसरे कमरे या रसोई आदि में खुलता है। बायीं ओर सामने वाली दीवार के कोण में कुछ ट्रंक एक-दूसरे के ऊपर रखे हैं। साथ में एक मेज पड़ी है, जिस पर पुस्तकों का ढेर बिखरा है। अंगीठी पर कुछ खिलौने और फूलदान पड़े हैं। दो चारपाइयाँ बीच में बिछी हैं। एक पर पं० हरिहर और दूसरी पर विद्याभूषण सो रहे हैं। एक ओर दो कुर्सियाँ भी पड़ी हैं।

पर्दा उठता है तो यह सब वस्तुएँ यथास्थान दिखाई देती हैं। सहसा परमेश्वरी का प्रवेश। दुबला-पतला शरीर जो मैली धोती से ढका है। हाथ में पुराना-सा झाड़ू है, चेहरे पर हर्ष-मिश्रित चिंता के भाव हैं।]

परमेश्वरी : (पति को झकझोरते हुए) मैंने कहा, कब तक बुत पड़े रहोगे ? देखो तो सही कितना दिन चढ़ आया है ! जल्दी से बिस्तर-विस्तर छोड़ो, चारपाइयाँ उठाओ । कमरे का कोई मुँह-सिर भी तो ठीक करना है। कौन जाने वे कब आ जाएँ ?

झाड़ू लगाती है। हरिहर हड़बड़ाकर उठ बैठता है। उसका शरीर दुबला, सिर के बाल छोटे, चेहरा पिचका, आगे के दो दाँत टूटे हुए हैं।

हरिहर : ओ...हो...आज सुबह-सुबह क्या आफत आई है ? पूरी नींद भी नहीं लेने देती। रात को ग्यारह बजे तक गलियाँ नपवाती रही। बारह बजे तो सोया हूँ, फिर आकर तूफान मचा दिया।

सो जाता है।

परमेश्वरी : अब सुबह-सुबह महाभारत ही करोगे या और भी कोई काम है ? तुम्हें तो कभी किसी की चिंता नहीं। वे जब आ जाएँगे, तो इधर-उधर भागना पड़ेगा। तुम्हारी मर्जी, पड़े रहो, मैं तो अपना काम निबटाऊँगी ही। (झाड़ू देते हुए) मुझे चूल्हे चौके की भी तो सोचनी है।

हरिहर : (मिट्टी से घबराकर) ओ हो...यह क्या तूफान मचा दिया है ? आराम का साँस भी लेने दोगी कि नहीं ?

[एक छोटा-सा कमरा, बायीं ओर दीवार में एक दरवाजा बाहर को खुलता है और दायीं ओर एक दरवाजा दूसरे कमरे या रसोई आदि में खुलता है। बायीं ओर सामने वाली दीवार के कोने में कुछ ट्रंक एक-दूसरे के ऊपर रखे हैं। साथ में एक मेज पड़ी है, जिस पर पुस्तकों का ढेर बिखरा है। अंगीठी पर कुछ खिलौने और फूलदान पड़े हैं। दो चारपाइयाँ बीच में बिछी हैं। एक पर पं० हरिहर और दूसरी पर विद्याभूषण सो रहे हैं। एक ओर दो कुर्सियाँ भी पड़ी हैं।

पर्दा उठता है तो यह सब वस्तुएँ यथास्थान दिखाई देती हैं। सहसा परमेश्वरी का प्रवेश। दुबला-पतला शरीर जो मैली धोती से ढका है। हाथ में पुराना-सा झाड़ू है, चेहरे पर हर्ष-मिश्रित चिंता के भाव हैं।]

हरिहर बिस्तर लपेटकर दूसरी चारपाई पर रखता है और अपनी चारपाई बाहर निकालता है। बिस्तर अन्दर ले जाता है।

परमेश्वरी : (भूपी को हिलाती हुई) भूपी···भूपी···?

भूषण : हूँ···

परमेश्वरी : उठ न बेटा ! देख कितना दिन चढ़ आया है ? फिर तैयारी भी तो करनी है, न जाने वे कब आ जाएँ ? उठ, तू तो जल्दी तैयार हो ले।

भूषण शीघ्र उठ बैठता है। दुबला शरीर, चेहरा कुम्हलाया हुआ, लम्बे बिखरे बाल, कपड़े मैले।

परमेश्वरी : यह बिस्तर-विस्तर लपेटकर अन्दर रख दे, और चारपाई इधर बिछा दे।

दायीं दीवार की ओर संकेत करती है। भूषण चारपाई बाहर निकाल, बिस्तर अन्दर रख आता है और चप्पल पहनकर बाहर निकल जाता है। हरिहर का एक मैली गरम चादर ओढ़े प्रवेश।

हरिहर : बोलो अब क्या करना है ?

परमेश्वरी : (चिढ़कर) आज का दिन तो चादर को तिलांजलि दे दो !

हरिहर : जाड़ा लग रहा है। नहा-धोकर कपड़े बदलूंगा तो नहीं ओढूंगा।

परमेश्वरी : वे जब आए बैठे होंगे, तब भी तुम्हें लड़ाई की ही सूझेगी ।

हरिहर : कौन आए बैठे होंगे ?

परमेश्वरी : लो, रात को कहाँ घूमते रहे हो ? तुममें यदि भुलक्कडपने की बातें न होतीं, तो आज तक भोले की तरह सभी बच्चों का ब्याह करके निश्चिन्त न हो गए होते ?

हरिहर : भोले ने कौनसा तीर मार लिया है जो मैंने नहीं मारा ? रात को तुम्हारे साथ घूमता तो रहा । वे अगर न मिलें तो इसमें मेरा क्या दोष है ?

परमेश्वरी : पर रामू की माँ ने तो यह कहा था न कि कल वे लड़का देखने आएँगे ।

हरिहर : आएँगे तो आएँ, देख जाएँ ।

सिरहाने के नीचे से ऐनक निकालकर लगाता है । दायें कान पर धागा लपेटता है ।

परमेश्वरी : ऐसे नरक को आकर देखेंगे ? कुछ तो मुँह-सिर भी ठीक करना होगा । क्या पता वे किस समय आ धमकें ?

हरिहर : (बिस्तर छोड़ते हुए) वे सुबह-सुबह थोड़े ही आ जाएँगे ?

परमेश्वरी : मुझे क्या और कोई काम नहीं ? रामू की माँ ने दस-ग्यारह बजे तक आने को कहा था, जल्दी से चारपाई बाहर रखो ।

हरिहर बिस्तर लपेटकर दूसरी चारपाई पर रखता है और अपनी चारपाई बाहर निकालता है। बिस्तर अन्दर ले जाता है।

परमेश्वरी : (भूषी को हिलाती हुई) भूपी···भूपी···?

भूषण : हूँ···

परमेश्वरी : उठ न वेटा ! देख कितना दिन चढ़ आया है ? फिर तैयारी भी तो करनी है, न जाने वे कब आ जाएँ ? उठ, तू तो जल्दी तैयार हो ले ।

भूषण शीघ्र उठ बैठता है। दुबला शरीर, चेहरा कुम्हलाया हुआ, लम्बे बिखरे बाल, कपड़े मैले ।

परमेश्वरी : यह बिस्तर-विस्तर लपेटकर अन्दर रख दे, और चारपाई इधर बिछा दे ।

दायीं दीवार की ओर संकेत करती है। भूषण चारपाई बाहर निकाल, बिस्तर अन्दर रख आता है और चप्पल पहनकर बाहर निकल जाता है। हरिहर का एक मैली गरम चादर ओढ़े प्रवेश ।

हरिहर : बोलो अब क्या करना है ?

परमेश्वरी : (चिढ़कर) आज का दिन तो चादर को तिलांजलि दे दो !

हरिहर : जाड़ा लग रहा है। नहा-धोकर कपड़े बदलूँगा तो नहीं ओढूँगा ।

परमेश्वरी : नहाने-धोने से पहले अपनी सूरत तो आईने में देख लो ! कितनी दाढ़ी बढ़ी हुई है? मेरा विचार है आज नाई से ही बनवाओ।

हरिहर : नाई से बनवाने की क्या आवश्यकता है? नया ब्लेड लाऊँगा। दो पैसे में चार हजामतें बन जाएँगी।

परमेश्वरी : जैसे मर्जी हो करो। पर मैं हाथ जोड़ती हूँ, उनके सामने कोई झगड़े-वगड़े वाली बात न करना।

हरिहर : मैं कब करता हूँ? हमेशा तू ही तो करती है।

परमेश्वरी : अच्छा बाबा मैं ही करती हूँ, बस।...हाँ, यह ऐनक आज लगाने के लायक है? कई बार कहा है कि इसकी कमानी लगवा लो, लेकिन नहीं। तुम्हें पता नहीं धागा लपेटने में क्या स्वाद आता है?

हरिहर : अब सुबह-सुबह कौन कमानी लगा देगा? धागा बदल लूंगा, बस और क्या? बायीं ओर की कमानी तो ठीक है। मैं चारपाई पर ऐसे ढंग से बैठूंगा कि उन्हें केवल कमानी ही दिखाई देगी।

परमेश्वरी : अच्छा, जो मर्जी करो, पर जल्दी तैयार हो जाओ।

हरिहर जाने लगता है।

: अरे हाँ ...अभी पहले सब्जी-तरकारी का प्रबन्ध करो। न जाने वे कब आ जाएँ? इसीलिए मैं चाहती हूँ कि यह रसोई-बसोई का टंटा पहले ही

समाप्त हो जाए तो अच्छा हो। रसोई में वर्तनों वाले फट्टे पर पैसे पड़े होंगे।

हरिहर : क्या लाऊँ ?

परमेश्वरी : जो मर्जी हो, ले आओ। यह समय वहस करने का नहीं। मुझे बहुत काम करना है।...और हाँ जरा मालती को भेज दो।

हरिहर : मैं हाथ-मुंह धोकर सब्जी लेने जाऊँगा !

जाता है। मालती का प्रवेश।

परमेश्वरी : मालती ! तू जरा...अरे मैं क्या कहना चाहती थी ? भूल गई...। अच्छा भूषी कहाँ है ?

अपने बाल खोलती है।

मालती : मुझे क्या पता ?

परमेश्वरी : सुबह उठकर सिवाय आवारागर्दी के इसे और कोई काम नहीं। जा, चन्दू की दुकान पर होगा, बुला ला। कहना जरूरी काम है।... (मालती का जाना) किसी को कुछ चिंता नहीं, वे जब आ जाएँगे तभी इनको होश आएगा।

ट्रंक खोलकर धोती और जम्पर निकालती है। मालती तथा भूषण का प्रवेश।

: कहाँ चले गए थे ? तुम्हें कहा भी था कि जल्दी तैयार होकर बैठो, न जाने वे कब आ जाएँ ?

भूषण : मैंने क्या करना है ? एक मिनट में नहाकर कपड़े पहन लूँगा।

परमेश्वरी : सो तो ठीक है, पर क्या दाढ़ी नहीं बनाएगा ?

भूषण : उसमें कितनी देर लगती है ?

परमेश्वरी : (भूषण का सिर देखकर) आज फिर सफेद बाल बहुत-से दिखाई दे रहे हैं। वह लोमा-वोमा जो लगाया करते थे, उससे कितना रंग बदला हुआ था। वह क्यों नहीं लगाते ?

भूषण : दो-तीन महीने तो लगाई।

परमेश्वरी : रंग भी तो बदल रहा था।

भूषण : कौन बीमारी पल्ले बाँध ले। हर महीने एक बोतल लो। हर महीने पाँच रुपये का टैक्स।

परमेश्वरी मैं देती हूँ, तुम्हें क्या होता है ?

भूषण : पर उधर किसी न किसी जरूरी चीज को भी तो बजट से काटना पड़ता है।

परमेश्वरी : अरे इससे जरूरी चीज और क्या होगी ? कई बार तुम्हें कहा है कि सगाई तक तो लगा लो फिर तुम्हारी मर्जी।

भूषण : मैं अब नहीं लगाऊँगा, चाहे सगाई हो चाहे न हो।

परमेश्वरी : मेरे बेटे, तू ऐसी बातें मत कर।...लोमा में यदि पैसों का झंझट है, तो भसमे में तो झंझट नहीं। आठ आने की शीशी आती है। महीना-भर चल जाती है। इतवार को एक बार लगाई, फिर हफ्ते भर की छुट्टी...भसमे से बाल भी खूब काले होते हैं। मेरा विचार है, आज वही लगा लो।

भूषण : उसी भसमे ने ही तो मेरे बालों का सत्यानाश किया है। थोड़े-से सफेद बालों पर तूने भसमा लगवा दिया, जिससे आधे से अधिक बाल सफेद हो गए।

परमेश्वरी : जो हो गए सो हो गए, उनको कौन रोक सकता है? पर इतने जल्दी बाल काले करने वाली कोई और चीज भी तो नहीं है? वही ठीक रहेगा। शेप नाग वाला ही मँगाऊँगी, जहाज छाप तो अच्छा नहीं, वह तो कुछ नसवारी-सा रग देता है।

भूषण : मैं कुछ नही लगाऊँगा।

परमेश्वरी : यह कैसे होगा? वे आकर क्या देखेंगे? बस आज का दिन लगा ले, फिर मैं कभी न कहूँगी।...बात सारी पक्की हो चुकी है। रामू की माँ ने मुझे बता दिया है कि वे ढीले हुए बैठे हैं। थोड़ी-सी बात के लिए सब खेल न बिगाड़। मैं शेपनाग छाप मँगवाती हूँ। दीशू...दीशू!

दीशू : (प्रवेश करता हुआ) आया!

परमेश्वरी : देख दीशू! पिताजी से आठ आने ले आ।

दीशू का प्रस्थान।

: (भूषण से) पहले तो तू बना ले दाढ़ी। इतने मे वह ले आएगा, फिर वह लगा लेना। हैं? जा जा, जल्दी कर, पांच मिनट में सब कर ले।

भूषण : पहनूँगा क्या?

परमेश्वरी : सलेटी पतलून और सफेद बुशर्ट।

भूषण : बनियान तो कोई है नहीं। यह मैली हो गई है।

दिखाता है।

परमेश्वरी : रात को मुझे देता तो मैं धो डालती, दीशू और मालती के भी तो धोए। अच्छा, चलो कोई बात नहीं, नई मँगवा देती हूँ। बस अब देर न कर, जल्दी जा। और मालती, तू जाकर आटा गूंध ले।

भूषण व मालती का प्रस्थान।

दीशू : (आकर) यह ले माँ।

परमेश्वरी : कितने लाया ?

दीशू : आठ आने।

परमेश्वरी : ठीक है। जल्दी से जा, गली के आखिर में जो दूकान है न उससे भसमे की शीशी ले आ।

दीशू : खिजाव की ?

परमेश्वरी : हाँ। कहना, शेषनाग छाप दे, वह अच्छी होती है। जहाज छाप न लेना।

दीशू : अच्छा।

जाने लगता है।

परमेश्वरी : अरे सुन ! एक बनियान भी लेनी है।…तू कैसे लाएगा ? जा पिताजी को भेज, वही सब ले आएँगे। कितनी देर हो गई, अभी तक उनका मुँह नहीं धुला ? जल्दी बुला ला।

दीशू का प्रस्थान। थोड़ी ही देर बाद हरिहर और दीनू का प्रवेश।

: यह कब तक मुँह धुलेगा ?

हरिहर : कहो और क्या काम है ? सब्जी लेने तो जा रहा हूँ।

परमेश्वरी : सो तो जा रहे हो, साथ में एक भसमे की शीशी और एक बनियान भी लेते आना। भसमा शेषनाग छाप लेना, दूसरा नहीं।

हरिहर : बनियान की क्या जरूरत है ?

परमेश्वरी : किसी समय न भी पूछा करो।

हरिहर : अच्छा भाई, लाओ पैसे दो।

परमेश्वरी : क्या सब खत्म हो गए ?

हरिहर : आठ आने तो इसको दिए, आठ आने की सब्जी आएगी। बाकी एक रुपया है, आगे के लिए भी तो रखना है !

परमेश्वरी : अभी बनियान लेते आओ, आगे देखा जाएगा।

हरिहर : अच्छा।

जाने लगता है।

परमेश्वरी : सुनो ! दीशू को साथ ले जाओ। भसमा इसके हाथ भेज देना, बाकी चीज बाद में लेते आना। शेषनाग छाप लेना, भूलना नहीं।...दीशू ! भाग के आना है !

दीशू और हरिहर का प्रस्थान।

: मालती...मालती...!

मालती का प्रवेश। दायां हाथ आटे से सना है।

: क्या कर रही थी ?

मालती : आटा गूंध रही थी।

परमेश्वरी : अच्छा छोड़ अभी उसे। हाथ धो ले। जरा अँगीठीपोश और मेजपोश झाड़कर सब चीजें ढंग से रख दे। कोई चादर भी है ढंग की या नहीं ?

मालती : मैली है।

परमेश्वरी : कल मुझे दी क्यों नहीं, धो देती। यह अँगीठीपोश और मेजपोश भी मैले हो रहे हैं। इनको उल्टा बिछा देना, काम चल जाएगा। दीशू आएगा तो बंगालन के घर से अच्छी चादर ले आएगा। अभी तू इन्हें झाड़ दे। मैं जाकर आटा गूंधती हूँ।

जाती है। मालती हाथ पोंछकर मेज और अँगीठी को झाड़ती है। दीशू खिजाब की शीशी लिए आता है।

दीशू : माँ कहाँ है ?

मालती : अन्दर गई है।

दीशू : माँ…माँ…।

परमेश्वरी : (आती है। दायाँ हाथ आटे से सना है।) लाया है ? (देखकर) अरे ! य' .। है कौआ छाप ? क्यों ? शेर था

दीशू : वह महँगा हो गया है।

कर देगो ' वह कहता

पि कर

परमेश्वरी : यह

दीशू : छः

अच्छा भी।

परमेश्वरी : इनको तो सस्ते की लगी रहती है। जा बदल ला।
(दीशू जाने लगता है) ठहर, अब इतना समय कहाँ है ? ला, दे, यही सही, कुछ तो होगा ही। (लेती है) और देख, तू साथ वाली बंगालन के पास जा। कह—मौसीजी, मेरी माँ कहती है कोई अच्छी धुली हुई चादर दे दीजिए। लाकर मालती को दे देना।

दीशू : अच्छा।

प्रस्थान

परमेश्वरी : सुन मालती ! चादर आ जाए तो इस चारपाई पर दरी बिछाकर ऊपर बिछा देना, हैं ? मैं भूपी को दवाई लगा लूं।

मालती : दरी तो मैली है।

परमेश्वरी : क्या हुआ ? नीचे रहेगी, ऊपर तो चादर ही सारी आ जाएगी।

मालती : सिरहाना तो कोई अच्छा-सा है नहीं।

परमेश्वरी : सिरहाने को क्या करना है ? ऐसे ही ठीक है। और सुन, सब्जी आ जाए तो छील-छाल देना।

जाती है। दीशू चादर लाकर मालती को देता है। दोनों दरी बिछाकर चादर बिछाते है।

दीशू : यह आज क्या हो रहा है ?

मालती : भूषण भैया की सगाई है आज। वे सब आएँगे।

दीशू : कौन…?

परमेश्वरी : अच्छा छोड़ अभी उसे। हाथ धो ले। जरा अँगीठीपोश और मेजपोश झाड़कर सब चीजें ढंग से रख दे। कोई चादर भी है ढंग की या नहीं ?

मालती : मैली है।

परमेश्वरी : कल मुझे दी क्यों नहीं, धो देती। यह अँगीठी-पोश और मेजपोश भी मैले हो रहे हैं। इनको उल्टा बिछा देना, काम चल जाएगा। दीशू आएगा तो बंगालन के घर से अच्छी चादर ले आएगा। अभी तू इन्हें झाड़ दे। मैं जाकर आटा गूँधती हूँ।

जाती है। मालती हाथ पोंछकर मेज और अँगीठी को झाड़ती है। दीशू खिजाब की शीशी लिए आता है।

दीशू : माँ कहाँ है ?

मालती : अन्दर गई है।

दीशू : माँ…माँ…।

परमेश्वरी : (आती है। दायाँ हाथ आटे से सना है।) लाया है ? (देखकर) अरे ! यह कौनसा लाया है ? कौआ छाप ? क्यों ? शेषनाग छाप नहीं था ?

दीशू : वह महँगा हो गया है। दस आने का। यह लगाकर देखो। वह कहता था, यह भी अच्छा है। पिताजी ने यह लेकर दिया है।

परमेश्वरी : यह कितने का है ?

दीशू : छः आने का। पिताजी कहते हैं सस्ता भी है और

अच्छा भी।

परमेश्वरी : इनको तो सस्ते की लगी रहती है। जा बदल ला। (दीशू जाने लगता है) ठहर, अब इतना समय कहाँ है ? ला, दे, यही सही, कुछ तो होगा ही। (लेती है) और देख, तू साथ वाली बंगालन के पास जा। कह—मौसीजी, मेरी माँ कहती है कोई अच्छी धुली हुई चादर दे दीजिए। लाकर मालती को दे देना।

दीशू : अच्छा।

प्रस्थान

परमेश्वरी : सुन मालती ! चादर आ जाए तो इस चारपाई पर दरी बिछाकर ऊपर बिछा देना, हैं ? मैं भूपी को दवाई लगा लूँ।

मालती : दरी तो मैली है।

परमेश्वरी : क्या हुआ ? नीचे रहेगी, ऊपर तो चादर ही सारी आ जाएगी।

मालती : सिरहाना तो कोई अच्छा-सा है नहीं।

परमेश्वरी : सिरहाने को क्या करना है ? ऐसे ही ठीक है। और सुन, सब्जी आ जाए तो छील-छाल देना।

जाती है। दीशू चादर लाकर मालती को देता है। दोनों दरी बिछाकर चादर बिछाते है।

दीशू : यह आज क्या हो रहा है ?

मालती : भूपण भैया की सगाई है आज। वे सब आएँगे।

दीशू : कौन···?

हरिहर का प्रवेश। दायें हाथ में थैला, बायें में बनियान है।

हरिहर : कहाँ गई है ?

मालती : माँ ? अन्दर है। सब्जी मुझे दे दो, मैं छीलूँगी। दीशू ! यह बनियान अन्दर दे आ और थाली और चाकू ले आ, जल्दी।

दीशू जाता है और थाली और चाकू लेकर आता है।

हरिहर : (चारपाई पर बैठकर) दीशू ! जरा जाकर नरेला तो भर ला। दो-एक दम लगा लूँ फिर नहाऊँगा।

मालती सब्जी छीलती है। दीशू जाता है और माँ सहित लौटता है।

परमेश्वरी : (दायें हाथ में काला ब्रश है) यह फिर क्या हुकम किया है ? अब क्या नरेला गुड़गुड़ाने का समय है ? उठो, जल्दी से तैयार हो जाओ।

हरिहर : तुम क्या नहा चुकी हो ?

परमेश्वरी : कहाँ (ब्रश दिखाकर) अभी भूपी को दवाई लगा रही थी।...अभी तक दाढ़ी भी नहीं बनवाई ?

हरिहर : (जेब से भारत ब्लेड निकालकर) ब्लेड तो मैं ले आया हूँ, अभी दाढ़ी रगड़ देता हूँ।

जाने लगता है।

परमेश्वरी : नया ब्लेड है ? पहले भूपी को दाढ़ी बनाने देना, फिर आप बनाना। पहले नहा लो, दाढ़ी तो फिर भी बन जाएगी। जल्दी करो। फिर मैंने भी

नहाना है।···सुनो ! लम्बा कोट पहनना, कुर्ता तुम्हें नहीं जँचता, पगड़ी बाँधना, लम्बे तिलक की आवश्यकता नहीं, छोटी-सी बिन्दी काफी है। वे मुंशी हैं, नौकरी-पेशे वाले हैं।

हरिहर : ओहो ! मुझ पर इतनी सख्ती क्यों कर रही है ? देखना तो उन्होंने भूपी को है।

परमेश्वरी : माता-पिता का भी तो कुछ प्रभाव पड़ता है।··· समझ लिया न ?

हरिहर : हाँ भई, जैसे फाँसी चढ़ाओगे चढ़ूँगा।

जाता है।

परमेश्वरी : (कमरे को देखकर) यह तो सब ठीक हो जाएगा, पर वे आकर बैठेंगे कहाँ ? चारपाई पर बैठाना तो ठीक नहीं। वे मुंशी हैं। कुर्सियाँ होनी चाहिए···पर कितनी ?···एक यहाँ और एक यहाँ···दो ही काफी हैं। न जाने कितने व्यक्ति आ जाएँ ?···दो से अधिक क्या आएँगे ? यदि रामू की माँ आ गई तो ?···वह चारपाई पर बैठ जाएगी, वह तो अपनी ही है। पर मेरा विचार है वह आएगी नहीं। हमारा पता जो उनको दे दिया है उसने।···मालती···!

मालती : जी !

परमेश्वरी : अरी अड़ोस-पड़ोस में किसी के घर कुर्सियाँ भी हैं ?

मालती : (सोचते हुए) कोई ध्यान में तो नहीं आ रही। शारदा की माँ के घर तो स्टूल हैं, मन्नू की माँ

के घर कुर्सियाँ तो हैं पर काम की एक नहीं,… सुरेश की माँ के घर कुर्सी अच्छी तो है पर एक है।

परमेश्वरी : एक का काम नही।

मालती : हाँ, भैया का मित्र है न गोपाल, उसके घर अच्छी कुर्सियाँ है।

परमेश्वरी : हाँ। जा तू भूपी को भेज दे। सब्जी लेती जा, वहीं बैठ के छील ले। पहले रोटी सेंक लेना, फिर सब्जी चूल्हे पर धर देना। भूपी को जल्दी भेज।…और सुन, यह लैम्प और खूंटियों पर लटके कपड़े उधर लेती जा। यह कमरा साफ होना चाहिए।

मालती सब लेकर जाती है। भूपी पाजामा वनियान पहने आता है।

: भूपी, तुम्हारे गोपाल के यहाँ अच्छी कुर्सियाँ हैं। वे यहाँ चाहिए।

भूषण : मैं इस हालत में कैसे जाऊँ? दीशू को भेज दो, मेरा नाम कहकर ले आएगा।

परमेश्वरी : हाँ।…दीशू… दीशू…(भूषण से) कैसी लगी है? इधर करो जरा।

हाथ के ब्रश से उसके बालों मे दवाई सुधारती है।

दीशू : (आकर) जी!

भूषण : दीशू! जरा गोपाल के घर चले जाओ, मेरा नाम कहकर दो कुर्सियाँ ले आओ।

दीनू : यदि वह न बैठा हो ?

भूषण : जो भी हो कह देना, वह दे देंगे।

परमेश्वरी : गद्दियाँ भी साथ लाना, जरा भाग के जाओ।

दीनू जाता है।

: (भूषण से) अभी ठीक नहीं लगी। मालती…
मालती, जरा दवाई वाला प्याला दे जाना।…
(भूषण से) तुम जरा स्टूल पर बैठ जाओ।

भूषण स्टूल पर बैठता है। मालती प्याला दे जाती है। माँ दवा लगाती है। हरिहर का केवल धोती बाँधे तौलिया उठाए प्रवेश।

हरिहर : अरे भई मेरी धोती कहाँ है? नजर नहीं आ रही।

परमेश्वरी : उधर होगी। इधर अब कुछ नहीं है।

हरिहर : उधर तो देख आया हूँ।

जाने लगता है।

परमेश्वरी : सुनो! अब न जाने वे कब आ जाएँ, मुझे समय मिले न मिले। मेरी एक-दो बातें सुन लो।

हरिहर : कहो, जल्दी कहो, मुझे जाड़ा लग रहा है।

परमेश्वरी : सोच-समझकर उनसे बात करना। ऊल-जलूल न कह देना। उमर पूछें तो बीस-बाईस की कहना। वह अलीगढ़ वाले इसी बात पर दूर हो गए थे। मैंने बीस कही, तुमने तीस के लगभग कह दी, वे उखड़ गए। दुकान-उकान का नाम न कहना। गोल-मोल बात करना, कि नौकरी

करता है, सौ से ऊपर लेता है। बस! वह पूछें तो कहना, नहीं तो कुछ कहने की आवश्यकता नहीं, मैं सब सँभाल लूँगी।...और हाँ उनके सामने भूपी-वूपी न कहना, विद्याभूषण आवाज देना! हैं?

हरिहर : बस, या और कुछ?

परमेश्वरी : बस यही याद रखना, भूलना नहीं। सोच-समझ कर बात करना।...और हाँ...हो सकता है वह तुम्हारे काम-काज के बारे में भी पूछ बैठें, तो क्या कहोगे?...यजमानों-वजमानों की बात न कह बैठना। वे मुंशी हैं, इन बातों को अच्छा नहीं समझेंगे। कह देना, घर में भगवान का दिया सबकुछ है। लड़का होनहार है। कहता है, मैं अब बड़ा हो गया हूँ, तुम्हें कुछ करने को क्या आवश्यकता है, बस आराम करो। यदि वे कुछ यजमानों के बारे में पूछें तो कह देना, कभी के छोड़ दिए है।

हरिहर : बस, अब मैं जाऊँ?

परमेश्वरी : पढ़ाई की पूछें तो कह देना दसवीं पास है। सर्टिफिकेट थोड़े देखने आएँगे।

हरिहर : अच्छा।

जाता है। दीपू का एक कुर्सी उठाए प्रवेश।

परमेश्वरी : मिल गई? ठीक है। यहाँ रख दो। दूसरी भी है न?

दीशू : हाँ, लाता हूं।

जाता है। परमेश्वरी कमरे को देखती है।

परमेश्वरी : बस अब ठीक है (दीशू दूसरी कुर्सी लाता है) ...लाओ तुम इनको ठीक ढंग से रखो और सब्जी के छिलके बाहर फेंककर जगह साफ कर दो। मैं अभी कपड़े बदलकर आई, अब मेरे नहाने-वहाने का समय नहीं।...

जाता है। दीशू कुर्सियाँ अदल-बदल-कर रखता है फिर छिलके चुनकर बाहर फेंककर जगह साफ करता है। बिस्तर आदि भी साफ करता है। इतने में परमेश्वरी नये कपड़े पहनकर दायें हाथ की दो अँगुलियों और अँगूठे पर कपड़ा लपेटे आती है।

परमेश्वरी : चल, जा, तू जल्दी से कपड़े बदल ले। मालती को भी कह देना। जरा बाल-बाल भी सँवार लेना।

दीशू जाता है। परमेश्वरी कमरे को देखती है।

आवाज : पण्डितजी ! ...पण्डितजी !!

परमेश्वरी : (घबराकर) शायद वे आ गए हैं ?

अपने कपड़े सँभालकर बाहर जाती है और एक पुरुष और स्त्री सहित वापस आती है।

परमेश्वरी : आइए जी ! बैठिए...

वे दोनों—रामनारायण और राधा—कुर्सियों पर बैठते हैं। दोनों बढ़िया कपड़े पहने हैं।

रामनारायण : पण्डितजी कहीं गए हुए हैं क्या ?

परमेश्वरी : जी ? नहीं, अन्दर ही हैं, अभी आ रहे हैं। अभी आ रहे हैं। (**चारपाई पर बैठना**) ···जगदीश··· बेटा जगदीश !।

आवाज : आया माताजी।

दीशू का प्रवेश।

रामनारायण : यह आपका लड़का है ?

परमेश्वरी : (**मुस्कराकर**) जी ! यह छोटा है, आठवीं में पढ़ता है। नमस्ते कर बेटा (**दीशू नमस्ते करता है**)··· वह इससे बड़ा है। (**दीशू से**) देख बेटा, पिताजी क्या कर रहे है ? उनको बुला ला। (**दीशू जाने लगता है**) और सुन (**उठकर दीशू के पास जाकर धीरे से कहना**) उन्हें कहना, वे आ गए हैं, ठीक होकर आएँ। और भैया से कहना, जरा जल्दी करेगा। और सुन, रसोई में चावलों का डिब्बा पड़ा है न ? उसमें एक रुपये का नोट है, निकालकर मिठाई ले आ। अन्दर से प्लेटों में सजाकर लाना। और मालती को कह दे जल्दी चाय तैयार करे। प्याले बंगालन के घर से ले लेना।

दीशू जाता है। परमेश्वरी आकर मुस्कराकर चारपाई पर बैठती है।

राधा : यह आपके हाथों को क्या हुआ है ?

परमेश्वरी : (घबराहट से छुपाते हुए) जी ! यह जरा दो अँगुलियाँ जल गई थी । काली स्याही लगाई है ।

रामनारायण : इस पर यदि आप बेसन घोलकर लगातीं तो बड़ा अच्छा होता। काली स्याही भी वैसे ठीक है ।

राधा : अच्छा आपके दो लड़के हैं ?

परमेश्वरी : (मुस्कराकर) जी हाँ, दो लड़के एक लड़की ! वह विद्याभूषण इससे बड़ा है । कोई अधिक बड़ा नहीं, यही कोई तीन-चार साल ।

रामनारायण : वह भी पढ़ता होगा ?

परमेश्वरी : जी ? नही, वह तो पढ़ चुका, अब तो वह नौकरी करता है ।

रामनारायण : ठीक है जी, ब्राह्मण वृत्ति में अब रखा ही क्या है !

परमेश्वरी : (मुंह बनाकर) जी, उसे तो इससे नफरत है ।

राधा : आपके पास इतनी ही जगह है ?

रामनारायण : अजी दिल्ली में इतनी ही जगह मिल जाए तो गनीमत है ।

परमेश्वरी : जी, हमारे पास दो कमरे है । एक यह है एक अन्दर, रसोई आदि अलग हैं (भूषण का प्रवेश) ···जो, यह है विद्याभूषण। आ बेटा, इधर आ जा ।

भूषण नमस्ते करके चारपाई पर बैठ जाता है ।

रामनारायण : मैट्रिक किया होगा आपने ?

भूषण : जी……

परमेश्वरी : जी हाँ, दसवीं पास कर चुका है। अब तो नौकरी करता है।

रामनारायण : कहाँ लगे हुए हैं ?

भूषण : जी…मैं…

परमेश्वरी : अजी सरकारी दफ्तर में काम करता है।

रामनारायण : अजी आजकल जहाँ काम मिल जाए, ठीक है। यह तो अच्छा हुआ यह सरकारी दफ्तर में लग गए हैं, नहीं तो सरकारी नौकरी के लिए न जाने कितने धक्के खाने पड़ते हैं।

माँ मुस्करा देती है। दीशू दो प्लेटों में मिठाइयाँ भरकर ले आता है। भूषण मेज आगे करके उस पर रखता है।

: ओहो ! आपने यह क्या कष्ट किया ?

परमेश्वरी : (सगर्व मुस्कराकर) अजी यह क्या है ? गरीबों का पत्र-पुष्प है। पानी तो पीना ही है।

रामनारायण : (भूषण से) आप भी आइए न।

भूषण : अजी बस आप खाइए।

परमेश्वरी दीशू को दूर ले जाती है।

परमेश्वरी : वह अभी तक क्या कर रहे हैं ?

दीशू : शेव कर रहे थे।

परमेश्वरी : उनको कहो जल्दी आएँ, और चाय भी ले आओ !

दीशू जाता है।

रामनारायण : पण्डित जी को क्या अभी बहुत देर है ?

परमेश्वरी : जी नहीं, अभी आ रहे हैं।······लीजिए वह आ गए।

हरिहर का सज्जित होकर प्रवेश। दोनों उठकर नमस्कार करते हैं।

हरिहर : अजी आप पधारिए न।

सब बैठते है। इतने में दीशू चाय रख जाता है।

रामनारायण : बस जी, आपको ऐसे ही कष्ट देने आए हैं।

हरिहर : अजी इसमें कष्ट क्या है ?

परमेश्वरी : अजी यह आपका घर है।

हँसती है।

रामनारायण : आप ब्याह-शादी तो पढ़ते ही होंगे ?

हरिहर : जी ?···घर में भगवान का दिया सब कुछ है। लड़का होनहार है···

रामनारायण : तो क्या आप नहीं पढ़ते, कब से छोड़ दिया है ?

हरिहर : (परमेश्वरी की ओर देखकर) जी······काफी समय से। लड़का सियाना है: होनहार है। कुछ करने नहीं देता।

रामनारायण : यह तो ठीक है, पर अपना कर्म छोड़ना भी तो कठिन है। यजमान बेचारे कहाँ जाएँगे ? (हरिहर और परमेश्वरी का एक-दूसरे का मुँह देखना) हम तो बड़ी आशा लिए आए थे।··· आपने शायद मुझे पहचाना नहीं ? आपके यजमान हैं न वे ला० गिरधारीलाल सर्राफ···

हरिहर : जी हाँ...

रायनारायण : मैं उनका साला हूँ। मेरा नाम रामनारायण है। कल मेरी लड़की की शादी है। हमारे पुरोहित थे तो हमें कोई कष्ट नहीं था। पिछले मास उनकी मृत्यु हो गई है। अब उनके लड़के इस काम को करते नहीं, नौकरीपेशा वाले हैं। मैं परेशान था। गिरधारीलाल जी ने आपका नाम बता दिया। मैंने कहा ठीक है हम स्वयं बुला लाते हैं। **(हरिहर और परमेश्वरी का एक-दूसरे को देखना)** अब आपने भी इनकार कर दिया तो किसी और को देखना पड़ेगा।

राधा : चलो जी, कुछ लेना-लिवाना भी तो है।

रामनारायण : चलते हैं। उन बेचारों ने इतना कष्ट किया है, यह सब जूठा छोड़ जाएँ तो वे क्या कहेंगे ! जल्दी से चाय-वाय पी लो, फिर चलते हैं। **(जल्दी से चाय पीकर उठकर)** अच्छा जी कष्ट क्षमा कीजिए।

हरिहर, परमेश्वरी और भूषण निराशा से हाथ जोड़ते हैं। दोनों जाते हैं।

दीपू : **(आकर)** वे चले गए पिताजी ? भैया की सगाई हो गई ?

हरिहर : खाक हो गई। मेरे मुँह से इनकार कराकर दस रुपये की आमदनी को लात मरवा दी। मोटी आसामी था, शायद दस के बीस तक भी दे देता।

परमेश्वरी : मुझे क्या पता था ? हाय ! एक रुपया मैंने उनकी मिठाई के' लिए छिपाकर रखा था वह भी यह राक्षस चट कर गए। अब वे आएँगे तो उनको क्या खिलाऊँगी ?

हरिहर : अब वे क्या आएँगे ? बारह बजने को हैं। जल्दी कर। मुझे खाना दे, मैं पाठ करने जाऊँ। कहीं उधर की भी पाँच रुपये महीने की आमदनी से हाथ न धो बैठूँ।

परमेश्वरी : क्या बजा है भूपी ?

भूषण : बारह बजने में केवल पाँच मिनट।

परमेश्वरी : अब उनका आना कठिन है। रामू की माँ ने ग्यारह बजे तक का समय दिया था।

हरिहर : मार गोली रामू की माँ को। मुझे जल्दी खाना ला दे पहले।

परमेश्वरी : बैठो, मैं लाती हूँ। दीशू,जाकर कुर्सियाँ दे आ। मालती को मैं भेजती हूँ, वह चादर दे आएगी। मैं खाना लाती हूँ। भूपी तू भी खा ले जा !

भूषण : मैं जरा देर से खाऊँगा।

बाहर चला जाता है।

हरिहर : मेरे लिए तो ला।

परमेश्वरी अन्दर जाती है। दीशू कुर्सी उठाकर बाहर जाता है। मालती चादर लेकर बाहर जाती है। हरिहर पगड़ी और कोट उतारकर चारपाई पर बैठता है दीशू आकर दूसरी कुर्सी ले जाता है।

दीशू : (भागते हुए आकर) माँ… माँ…

परमेश्वरी : (भोजन की थाली लिए प्रवेश) क्या है ?

दीशू : माँ वे आ गए हैं। साथ में रामू की माँ भी है ?

परमेश्वरी : आ गए हैं ?

घबराहट में थाली हाथ से छूट जाती है।

पटाक्षेप

स्वास्थ्य का रक्षक

सरक़ार की ओर से प्रदान किया जाने वाला आर० एम० पी० का प्रमाण-पत्र किसी व्यक्ति के डाक्टर बनने के लिए एक सुलभ रास्ता है चाहे वह पहले ताँगा चलाता रहा हो अथवा चाट बेचता रहा हो। कुछ समय किसी साधारण से डाक्टर की कम्पौंडरी अथवा कृपा से कोई भी व्यक्ति यह प्रमाण-पत्र प्राप्त कर जनता के जीवन से खिलवाड़ कर सकता है। प्रस्तुत नाटक एक ऐसे ही डाक्टर का चित्र है।

पात्र

डा० आर० एन० वर्मा—नया बना डाक्टर (आयु ३५ वर्ष)

एजेंट—दवाइयों का एजेंट (आयु ५० के लगभग)

बच्चे वाला व्यक्ति
लट्ठ वाला व्यक्ति } दो देहाती (आयु ३५ और ४० के लगभग)

शीला—डा० वर्मा की पत्नी (आयु २८ वर्ष)

बुढ़िया—(आयु ५५ के लगभग)

दो छोटे बच्चे—(आयु ४ वर्ष और २ वर्ष)

[डॉ० एन० आर० वर्मा की डिस्पैंसरी। एक कमरे को कपड़े के पार्टीशन लगाकर तीन भागों में बांटा गया है। आगे के भाग में दायी ओर की दीवार के साथ एक घूमने वाली पुरानी कुर्सी पड़ी है, जिस पर कत्थई रोगन चढ़ाकर नई बनाने का प्रयत्न किया गया है। उसके आगे एक मेज है, जिस पर नीले रंग का कपड़ा बिछा है। ऊपर ब्लाटिंग पेपर लगा गत्ता पड़ा है। सामने लकड़ी का कलमदान, जिसमे दो होल्डर पड़े हैं, पड़ा है। दायीं ओर एक छोटा-सा पुराना परन्तु रोगन किया हुआ रैंक पड़ा है, जिसमें कुछ पत्रियां टँगी है। बायी ओर एक अधमैला-सा 'स्टैथेस्कोप' पड़ा है। पीछे की दीवार पर एक बड़ा-सा कैलेंडर लगा है। सामने की दीवार मे पर्दे के पीछे 'कंसल्टेशन रूम' बना है, जिसका पर्दा थोड़ा-सा हटा है जिसमे से एक लम्बी मेज का आधा भाग दिखाई दे रहा है। उसकी बायी ओर एक छोटा-सा दरवाजा अन्दर को खुलता है, जिस पर नीला पर्दा पडा है। बायी ओर की दीवार मे नीले पर्दे से डिस्पैंसरी बनी है, जिसके अन्दर अलमारी का आधा भाग दिखाई दे रहा है जिसमें कुछ दवाई की शीशियां और बोतलें पड़ी है। डिस्पैंसरी के सामने की ओर अर्थात् बाहर के दरवाजे की ओर प्लाईवुड का पार्टीशन है, जिसमे एक छोटी-सी खिड़की कटी है, शायद दवाई देने की खिड़की है। नीचे ईंटों का फर्श है जिस पर अभी-अभी झाड़ू लगाया गया है।

पर्दा उठता है तो यह सारा दृश्य दिखाई देता है। डा० एन०आर०वर्मा—दुबला शरीर, सांवला रंग, एक ढीला-सा सूट पहने और एक मैली-सी टाई बांधे, आंखों पर मोटा-सा चश्मा लगाए अपनी टेबल पर चढ़कर बीच का पर्दा ठीक कर रहा है। फिर कुर्सी-मेज ठीक प्रकार से रखता है और साफ करता है, फिर बाहर के दरवाजे पर पड़े एक बहुत बड़े बोर्ड को साफ करके उसे ध्यान से पढ़ता है और प्रसन्न मुद्रा में सारे कमरे की सजावट देखता है।]

वर्मा : हूँ ! अब ठीक है। कौन कह सकता है, कि यह डिस्पेंसरी नहीं ? (फिर अपने को देखकर और स्टेथेस्कोप हाथ में लेकर) कौन कह सकता है, कि मैं डाक्टर नहीं हूँ।

कुर्सी को घुमाकर देखता है। फिर उस पर बैठता है। फिर खड़े होकर मेज की चीजें उलट-पुलटकर रखता है। दवाइयों के एजेंट का बैग उठाए प्रवेश। साँवले रंग का व्यक्ति। शरीर दुबला। सफेद कमीज और पैंट पर रंगदार टाई।

एजेंट : नमस्ते डाक्टर साहब !

वर्मा : (अपने कपड़ों आदि को सुधारकर) आइए जी पधारिए।

कुर्सी पर बैठने का संकेत करता है।

एजेंट : जी ! मैं दवाइयों का एजेंट हूँ। आप ही ने दवाइयों की लिस्ट भेजी थी न हमारी कम्पनी में ? उनमें से बहुत-सी दवाइयाँ तो आपको भेज दी गई थीं, बाकी कुछ दवाइयाँ मैं लाया हूँ।

वर्मा : अ्...जी हाँ ! अ्...बाकी आप लाए हैं ? बड़ी खुशी की बात है।

एजेंट : (बैग खोलते हुए) आपने शायद नई प्रैक्टिस शुरू की है ?

वर्मा : जी ?...जी हाँ, ऐसे ही समझ लीजिए।

एजेंट : मेरा तो प्रायः इधर का फेरा रहता ही है। पर

कभी आपको डिस्पेंसरी की ओर ध्यान नहीं गया। आज गली में घुसते ही एक दम बोर्ड पर दृष्टि गई तो जान गया।

डा० वर्मा गर्व के साथ मुस्कराता है।

: (ध्यानपूर्वक देखकर) आपको शायद कहीं देखा है? कुछ ऐसा भ्रम हो रहा है।

वर्मा : जी हाँ देखा होगा, संसार में बहुतों के रूप-रंग आपस में मिलते-जुलते हैं।

एजेंट : नहीं, आपको ही मैंने कहीं देखा है। मुझे ठीक प्रकार से ध्यान है, पर याद नहीं आ रहा कि कहाँ पर देखा है। (सोचता है) अ् हाँ…आप शायद कभी डा० भाटिया के पास नहीं थे?

वर्मा : (घबराकर) जी?…

एजेंट : हाँ, आप ही तो थे? वह डा० भाटिया, जो मोटे-से हैं और आधी मूँछें रखते हैं। छोटे बाजार के मोड़ पर जिनकी डिस्पेंसरी है।

वर्मा : जी …?

एजेंट : आपका नाम नत्थूराम नहीं?

वर्मा : जी…मैं…

एजेंट : बाहर एन० आर० वर्मा पढ़कर आपका ध्यान ही नहीं आया। और अन्दर आकर आपका रंग-ढंग देखकर मैं आपको पहचान ही नहीं सका। वहाँ तो आप प्रायः पाजामे में रहते थे।

वर्मा चुप रहता है।

: खैर जी, आपने यह बड़ा अच्छा किया। मनुष्य

प्रगतिशील है। यदि वह आगे न बढ़े तो जड़-पत्थर बन जाए।...अच्छा कब से आपने अपनी अलग प्रैक्टिस आरम्भ की है। भाटिया से कुछ मनमुटाव हो गया क्या?

वर्मा : जी...हाँ...ऐसे ही...

एजेंट : अजी, वर्माजी! आप घबराइए बिलकुल नहीं। दिल्ली में तो ऐसे सैकड़ों डाक्टर हैं जो पहले कम्पौंडर थे। चलिए मेरे साथ मैं दिखाऊँ। अपना तो धंधा ही ऐसा है। मैं तो कहता हूँ कि यह कम्पौंडर डाक्टर फिर भी अच्छे हैं, कुछ न कुछ तो इनको ज्ञान होता ही है। बीमारियों तथा औषधियों से कुछ न कुछ परिचित तो होते हैं। मैं तो आपको ऐसे डाक्टर भी दिखाऊँ जो पहले ताँगा हाँकते थे या तरकारी बेचते थे और उनकी भी प्रैक्टिस खूब चल रही है।

वर्मा : (सँभलकर) जी हाँ, ऐसे बेकार के डाक्टर बहुत-से हैं।

एजेंट : अजी औरों को छोड़िए, आप अपने डा० भाटिया से पूछिए कि कौन-सी डाक्टरी पास है।

वर्मा : (उत्तेजित होकर) क्या वह डाक्टरी पास नहीं है?

एजेंट : अजी कहाँ? यह पहले डा० मोहनलाल खन्ना के ही कम्पौंडर थे। उससे अनबन हुई तो सन् ५० में इन्होंने अपनी प्रैक्टिस शुरू की, जैसे अब आपने शुरू की है। अजी यह सब गुप्त भेद

तो हमसे पूछिए। अब देखिए कितनी शान से डाक्टरी कर रहा है।

वर्मा : अजी अब तो उसको और कुछ नहीं तो पचास रुपये रोज की आय है।

एजेंट : अजी यह सब किसकी बदौलत ? वह-वह पेटेंट दवाइयाँ लाके दीं कि बस उसके रोगी दंग रह गए।

वर्मा : अच्छा ?……तो फिर साहब हमपे भी दया करनी है आपने।

एजेंट : अजी आप तिल मात्र भी न घबराए। देखिए आपकी प्रैक्टिस दिनोंदिन कैसी चमकती है।

दवाई निकालकर मेज पर रखता है।
वर्मा प्रसन्नता से देखता है।

: बस दो-चार टैक्ट हैं। एक तो डिस्पेंसरी अच्छी, साफ-सुथरी और सज्जित होनी चाहिए। दूसरे, अपना ठाट-बाट ठीक होना चाहिए।

वर्मा : वह तो सब मैंने पहले ही से ठीक कर रखा है।

एजेंट : जी हाँ, यह भी आपने ठीक किया जो एक बढ़िया-सा बोर्ड बनवा लिया। और डिग्रियाँ भी जड़ दी हैं। खूब ! दवाइयाँ भी आपने अच्छी मँगवाई हैं। भाटिया के पास रहकर निपुणता तो आपके पास आ ही गई है।

वर्मा गर्व के साथ हँसता है।

: अजी साब बढ़िया बोर्ड का और उस पर डिग्रियों का जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

कई लोग तो केवल डिग्रियों पर ही मरते हैं। और डिग्रियाँ भी यदि अंग्रेजी हों तो बस कमाल है। और फिर डिग्रियाँ तो आजकल घर बैठे ही पहुँच जाती हैं। पैसा दो और डिग्री लो। आपने डिग्रियाँ कहाँ से मँगवाई हैं?

वर्मा : (झेंपकर) अ् एक-आध कलकत्ता से मँगवाई है, एक-आध लखनऊ से।

एजेंट : ठीक है, ठीक है।

दोनों हँसते हैं।

: पर वर्मा साहब, एक बोर्ड से काम नही चलेगा।

वर्मा : अजी यह तो पहला बोर्ड है, आज ही बनकर आया है। वैसे तो मैंने अभी तीन-चार और बोर्डो का आर्डर दिया हुआ है। एक पर पुरुषों की भयानक बीमारियाँ, एक पर स्त्रियों के गुप्त रोग, एक पर अपने अनुभव का विवरण और एक पर "अजी आप कुछ दिन बाद देखेंगे कि इस डिस्पेंसरी के बाहर और अन्दर इतने बोर्ड लग जाएंगे कि कही कोई कील गाड़ने को भी स्थान न रहेगा।

एजेंट : हाँ! आप तो सब चालें सीखे हुए हैं। एक बात और है, एक बोर्ड आप ऐसा बनवाएँ जिस पर लिखाएँ कि छोटी-मोटी बीमारियाँ, जैसे कान, नाक, आँख आदि में दवाई मुफ्त डाली जाती है और निर्धन व्यक्तियों का इलाज मुफ्त किया जाता है।

वर्मा : हाँ ''यह भी मैं सोच रहा था।

एजेंट : अजी इससे बड़ा लाभ होता है। इन आँख, नाक की दवाइयों में कुछ विशेष खर्चा नहीं बैठता। फिर इन मुफ्त की दवाइयाँ डलवाने वालों की यदि संख्या बढ़ भी जाए तो कोई हानि नहीं, बल्कि आने-जाने वालों और देखने वालों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। वह समझते हैं कि इसकी प्रैक्टिस अच्छी चल रही है। और अपने भारतवर्ष में यह एक भेड़चाल है कि भीड़ के पीछे सब जाते हैं। स्वयं सोचने का कष्ट तो कोई करता नही, जो सबको करते देखते है वही स्वय करने लग जाते हैं।

वर्मा : जी हाँ, भारतीयों की इसी चाल का लाभ तो सब उठा रहे है।एक स्थान पर यदि चार व्यक्ति खड़े होंगे तो चार और ख्वामख्वाह खड़े हो जाएँगे।

एजेंट : और फिर यदि उनसे पूछा जाए कि भाई यहाँ क्या है ? तो कहेंगे कि पता नहीं।

दोनो हँसते है।

वर्मा : यह हाल है लोगों का।

एजेंट : और दूसरी बात जो मैंनेनिर्धनों का इलाज मुफ्त करने को कही है तो उससे यह लाभ है कि पहले तो कोई अपने का निर्धन कहने को तैयार नही, फिर इसके लिखने सेजनता पर यह प्रभाव पड़ता है कि लोग समझ लेते हैं कि डाक्टर दयालु है।

और जहाँ जनता के मन में ऐसे भाव आए तो डाक्टर का वेड़ा पार।

वर्मा : (हँसते हुए) जी हाँ।

एजेंट : अजी साहव, अपनी तो सारी आयु इसी में वीती है। तीस साल हो गए हैं यह धंधा करते-करते। अव तो हम हर अच्छे डाक्टर की कलावाजियाँ पहचान लेते हैं। और हमारे इस अनुभव से वहुत डाक्टरों को लाभ होता है और हुआ है।

वर्मा : अजी हमें भी तो आपका सहारा है।

एजेंट : आप विल्कुल निश्चिन्त होकर प्रेक्टिस कीजिए। सामान्य रोगों की पेटेंट औषधियाँ तो आपने मँगवा ही ली हैं। कल मैं दे जाऊँगा नई औष-धियों के सूचीपत्र जिनमें औषधियों का पूरा विवरण और किस रोग में रामवाण हैं, सव लिखा होगा।

वर्मा : वस वस ! यदि ऐसा हो जाए तो वाकी कठिनाई रहेगी क्या ?

एजेंट : अजी कठिनाई का तो काम ही नहीं।...अच्छा डाक्टर साहव, यह आपने नहीं वताया कि आपने अपनी प्रेक्टिस में कौनसी पद्धति अपनाई है? वैसे आपको दवाइयों की लिस्ट से तो पता चल गया कि आपने होम्योपैथिक पद्धति ही अपनाई है, पर आपका वोर्ड पढ़कर कुछ भ्रम में पड़ गया हूँ।

वर्मा : अ...आप तो सव जानते ही होंगे कि आजकल

कौनसी पद्धति प्रचलित है ?

एजेंट : अजी वैसे तो सभी पद्धतियाँ चल रही हैं, परन्तु प्रायः डाक्टरों ने दो-दो पद्धतियों को जोड़ा हुआ है। पर आपके वोर्ड से पूरी प्रकार से कुछ ज्ञात नहीं हो सका।

वर्मा : (हँसकर) अजी मैंने चार पद्धतियों को मिला रखा है।

एजेंट : (हँसकर) हाँ यह तो मुझे वोर्ड से पता चल गया था कि आपने कविराज भी और डाक्टर भी लिख रखा है और साथ में ऐलोपैथिक और होम्योपैथिक डिग्रियों को मिलाया हुआ है।

वर्मा : जी हाँ···

एजेंट : वैसे तो यह चाल ठीक है परन्तु फिर भी अन्दर से आपको किन्हीं दो पद्धतियों को ही प्रमुखता देनी होगी।

वर्मा : वह फिर आप ही वताएँगे।

एजेंट : जी हाँ, सुनिए, मेरे विचार में आप अधिकतर होम्योपैथिक को ही अपनाइए क्योंकि आपको उसका पूरा ज्ञान है।

वर्मा : इसीलिए तो मैंने होम्योपैथिक दवाइयाँ ही मँगवाई हैं।

एजेंट : हाँ ! और साथ में रखिए देसी और अंग्रेजी पेटेंट औषधियाँ। वैसे मैं एलोपैथिक का विरोधी नहीं हूँ। परन्तु उसमें एक वात वुरी है कि वह पद्धति वहुत कुछ महँगी है और डाक्टरों को विवश

होकर दवाई के बारह आने या एक रुपया लेना पड़ता है। और इसके विरुद्ध होम्योपैथिक दवाइयाँ सस्ती हैं। उसमें डाक्टर तीन या चार आने लेकर रोगियों को प्रसन्न कर सकता है। यह बात ठीक है कि एलोपैथिक औषधियाँ शीघ्र असर करती हैं पर रोगियों को इसकी चिन्ता नही होती, वह तो डाक्टरों का मुकाबला उसके चार्जिज पर करते है। उनकी आँखों में सस्ता डाक्टर ही अच्छा रहता है। फिर साथ में पेटेंट औषधियों की गोलियाँ अपना चमत्कार दिखाती हैं जो इतनी महँगी नही होतीं। और फिर नये डाक्टरों के लिए होम्योपैथिक ही ठीक है। क्योंकि कोई सो औषध देने से कोई हानि की आशंका नहीं रहती।

वर्मा : जी हाँ, मेरा स्वयं का भी ऐसा ही विचार है, और मैं कर ही ऐसा रहा हूँ।

एजेंट : हाँ, यह ठीक है। आप तनिक न घबराइए। मैं साथ में आपको होम्योपैथिक की पुस्तक भी दे जाऊँगा, बस उसमें रोगी की सिमटम्स देखीं और दवाई दी।

वर्मा : पुस्तक तो मेरे पास है।

एजेंट : किसकी लिखी हुई है ?

वर्मा : यह तो पता नहीं। कबाड़ी की दुकान से पुरानी-सी मिल गई थी, काम चला रही है।

एजेंट : अजी छोड़िए उसको। मैं आपको भट्टाचार्य की

कौनसी पद्धति प्रचलित है ?

एजेंट : अजी वैसे तो सभी पद्धतियाँ चल रही हैं, परन्तु प्रायः डाक्टरों ने दो-दो पद्धतियों को जोड़ा हुआ है। पर आपके बोर्ड से पूरी प्रकार से कुछ ज्ञात नहीं हो सका।

वर्मा : (हँसकर) अजी मैंने चार पद्धतियों को मिला रखा है।

एजेंट : (हँसकर) हाँ यह तो मुझे बोर्ड से पता चल गया था कि आपने कविराज भी और डाक्टर भी लिख रखा है और साथ में ऐलोपैथिक और होम्योपैथिक डिग्रियों को मिलाया हुआ है।

वर्मा : जी हाँ···

एजेंट : वैसे तो यह चाल ठीक है परन्तु फिर भी अन्दर से आपको किन्ही दो पद्धतियों को ही प्रमुखता देनी होगी।

वर्मा : वह फिर आप ही बताएँगे।

एजेंट : जी हाँ, सुनिए, मेरे विचार में आप अधिकतर होम्योपैथिक को ही अपनाइए क्योकि आपको उसका पूरा ज्ञान है।

वर्मा : इसीलिए तो मैंने होम्योपैथिक दवाइयाँ ही मँगवाई हैं।

एजेंट : हाँ ! और साथ में रखिए देसी और अंग्रेजी पेटेंट औषधियाँ। वैसे मैं एलोपैथिक का विरोधी नही हूँ। परन्तु उसमें एक बात बुरी है कि वह पद्धति बहुत कुछ महँगी है और डाक्टरों को विवश

होकर दवाई के बारह आने या एक रुपया लेना पड़ता है। और इसके विरुद्ध होम्योपैथिक दवाइयाँ सस्ती हैं। उसमें डाक्टर तीन या चार आने लेकर रोगियों को प्रसन्न कर सकता है। यह बात ठीक है कि एलोपैथिक औषधियाँ शीघ्र असर करती हैं पर रोगियों को इसकी चिन्ता नहीं होती, वह तो डाक्टरों का मुकाबला उसके चार्जिज पर करते हैं। उनकी आँखों में सस्ता डाक्टर ही अच्छा रहता है। फिर साथ में पेटेंट औषधियों की गोलियाँ अपना चमत्कार दिखाती हैं जो इतनी महँगी नहीं होतीं। और फिर नये डाक्टरों के लिए होम्योपैथिक ही ठीक है। क्योंकि कोई सी औषध देने से कोई हानि की आशंका नहीं रहती।

वर्मा : जो हाँ, मेरा स्वयं का भी ऐसा ही विचार है, और मैं कर ही ऐसा रहा हूँ।

एजेंट : हाँ, यह ठीकहै। आप तनिक न घबराइए। मैं साथ में आपको होम्योपैथिक की पुस्तक भी दे जाऊँगा, बस उसमें रोगी की सिमटम्स देखीं और दवाई दी।

वर्मा : पुस्तक तो मेरे पास है।

एजेंट : किसकी लिखी हुई है?

वर्मा : यह तो पता नहीं। कबाड़ी की दुकान से पुरानी-सी मिल गई थी, काम चला रही है।

एजेंट : अजी छोड़िए उसको। मैं आपको भट्टाचार्य की

पुस्तक दे जाऊँगा जो मार्केट में सर्वोत्तम है।

वर्मा : परन्तु साहब ! वह तो अंग्रेजी में होगी ?

एजेंट : जी हाँ।

वर्मा : अ्...यदि हो सके तो कोई हिन्दी में भिजवाइए।

एजेंट : जी हाँ, आजकल तो उसके हिन्दी अनुवाद भी मिल रहे है, मैं वही ला दूंगा।

वर्मा : बस बस, फिर ठीक है।...अ्...क्या आप आयुर्वेदिक या यूनानी तो नही रखते ?

एजेंट : अजी रखता तो नहीं, पर आप चिन्ता न कीजिए, उसके अच्छे-अच्छे एजेंट भी मेरे परिचित हैं, जैसे गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, वैद्यनाथ प्राणदा और साथ में हमदर्द दवाखाना।

वर्मा : बस बस, उनमें भी किसी से बातचीत करवा दीजिए।

एजेंट : अजी कल ही लीजिए। अ् ..यह पीछे क्या स्टोर है आपका ?

वर्मा : जी ! यह पीछे अपना रेजीडेंस है...अजी हमें तो आपका ही सहारा है। बस साहब आप ही के गुण गाऊँगा।

एजेंट : अजी आप बिल्कुल निश्चिन्त रहिए।...अच्छा डाक्टर साहब !

वर्मा : (उठकर) अच्छा जी, आपका अमूल्य समय नष्ट किया।

एजेंट : अजी ऐसी क्या बात है ? अपना तो यह काम ही है।

दोनों हँसते हैं।

वर्मा : अच्छा जी फिर भूलिएगा नहीं।

एजेंट : अजी यह तो अपना काम है · अच्छा नमस्ते।

वर्मा : नमस्ते जी :

एजेंट चला जाता है।

: (उठकर पीछे के दरवाजे की ओर जाकर प्रसन्न मुद्रा में) ए जी मैंने कहा, जरा इधर तो आओ, देखो तो सही ठाठ अपने हास्पीटल के।

वर्मा की पत्नी शीला पिछले द्वार से प्रवेश करती है। साधारण साड़ी मे गोरा शरीर। रंग गेहुँआ।

शीला : जी ? क्या है ? कुछ काम भी करने दोगे या नहीं ?

वर्मा : काम-वाम तो होता रहेगा, जरा देखो तो सही यहाँ के ठाट। देखो यह रही डिस्पेंसरी, यह रहा कंसल्टेशन रूम, यह रही डाक्टर साहब की कुर्सी (कुर्सी को घुमाकर हँसना) और यह रहीं ढेर-सी दवाइयाँ। अब बोलो ! लगती है एक अच्छे-खासे डाक्टर की डिस्पेंसरी, क्यों ? सच पूछो तो इस घूमने वाली कुर्सी ने कमाल कर दिया है (कुर्सी को घुमाना) जीते रहें जामा मस्जिद के कबाड़ी जिनकी बदौलत मेरी सड़ी हुई दुकान कौड़ियों में एक अच्छा खासा हास्पीटल बन गई है।

शीला : (देखकर) हाँ ! अब कुछ जँच रहा है !

वर्मा : (हँसकर) अभी देखो तो सही इसके रँग-ढँग क्या निकलते हैं। लोग प्राय: यही शिकायत करते थे कि मेरी डिस्पेंसरी एक पंसारी की दुकान दिखाई देती है। अब आकर देखें।

शीला : सो तो सब ठीक है, पर इस कोरे ठाट-बाट से क्या होगा ? महीना-भर हो गया दुकान खोले। तीस दिन में तीस पैसे भी तो नहीं आए।

वर्मा : तीस पैसे ? कल ही एक मरीज फँसा था। उससे छः रुपये ऐंठे थे। तुम तो मायके गई हुई थीं।

शीला : अच्छा ! कहाँ है ?

वर्मा : आज आकर क्या घर में तुम्हें कोई परिवर्तन दिखाई नहीं दिया ? आटा, दाल, घी, कोयला, नमक-मिर्च सब कुछ क्या तुम्हें दिखाई नहीं दिए।

शीला : हाँ तभी तो मैं हैरान भी हुई, मुझे बताया तक भी नहीं।

वर्मा गर्व से मुस्कराता है।

: महीने में छः रुपये कमाए तो कौनसा किला जीता ?

वर्मा : अरी पगली, धैर्य से ही सब काम होते हैं। वह तीस दिन तो समझो, थे ही नहीं। उन दिनों को मेरे डाक्टरी जीवन में से निकाल दो। वह तो ऐसे समझो, मैंने कोई काम नहीं किया था, मैं निठल्ला रहा था। आज से ही मेरे डाक्टरी जीवन का श्रीगणेश समझो। और बाकी रही

फोके ठाट-वाट की वात, तो वह यह है कि पहले-पहल ऐसा करना ही पड़ता है, दुनिया दिखावे पर मरती है। अब देखना *क्या होता है?*

शीला : यदि ऐसी वात थी तो यह तीस दिन ऐसे क्यों गँवाए?

वर्मा : वास्तव में सच पूछो तो मैं अब डाक्टर वना हूँ क्योंकि मैंने अब ही दुनिया की नब्ज पहचानी है। यह दुनिया सिवाय ठाट-वाट के कुछ नहीं देखती। इसकी आँखें बनावटी हैं, असली नहीं है, जो असलियत को पहचान लें। यह तो वाहरी आडम्बरों तक ही देख पाती हैं, उसके अन्दर देखने की इनमें क्षमता नहीं है। इसीलिए हमें तो उसकी आँखों को चुँधियाना है।

शीला : भला अब यह नुस्खा कहाँ से हाथ लगा डाक्टर साहब?

वर्मा : जी? क्या कहा?···डाक्टर साहब! हूँ, दुनिया ने तो तीस दिन पहले से ही डाक्टर साहब कहना आरम्भ कर दिया था। आज तुम्हारे मुँह से भी सुन लिया। वस अब मुझे कोई चिन्ता नहीं। जब तक अपने सम्मान न करें तब तक आदमी अधूरा रहता है।

शीला : कोरे सम्मान से क्या होता है? दुकान पे कोई मरीज चढ़ेगा तभी सच्चा सम्मान होगा।

वर्मा : (गम्भीर होकर) शीला! अभी तुम्हें दो-चार वातें समझानी हैं। पहली तो यह है कि आज से

नहीं वल्कि अव से इसे दुकान न कहना। या तो हास्पीटल कहो या डिस्पेंसरी कह सकती हो। इससे भी सम्मान की मात्रा वढ़ती है।

शीला : (हँसकर) अभी-अभी तुम डाक्टरी कर रहे थे परन्तु अव देख रही हूँ कविता भी करने लगे हो।

वर्मा : (हँसकर) वस देखती जाओ, मैं क्या-क्या करता हूँ।

शीला : अच्छा डाक्टर साब, यह नुस्खा, वताओ तो कहाँ से हाथ लगा?

वर्मा : (मेज की ओर संकेत करके) इन दवाइयों को देख रही हो।...अभी-अभी एक दवाइयों का एजेंट आया था। वड़ा घिसा हुआ है। वह यह सव नुस्खे वता गया है। कहता है मैं आपकी डाक्टरी को चमका दूँगा। उसने भी मेरे ठाट-वाट को सराहा है। इस ठाट-वाट को कोरा न समझो। यह ठाट [illegible] चमत्कार दिखाता है। हेमराज क[illegible] डाक्टर [illegible] वना वैठा है। [illegible] सारी था[illegible]

उसकी दुकान से गुजरा तो उसका बोर्ड देखकर उसकी सारी कहानी मेरे सामने आ गई। तभी मुझे यह नुस्खा हाथ लगा। मैंने सोचा मैं भी ऐसा क्यों न कर लूं।

शीला : पैसा कहीं से लिया था?

वर्मा : उधार! घबराने की बात नहीं। प्रैक्टिस चलने पर एक-दो मास में ही उतर जाएगा।

शीला : कितना लिया?

वर्मा : एक सौ।

शीला : सारा खर्च हो गया?

वर्मा : हां! केवल दस रुपये बचे हैं।

जेब में से नोट निकालता है और फिर जेब में डाल लेता है।

शीला : जब इतना खर्च किया तो बोर्ड भी बनवा लेना था।

वर्मा : बनवा भी लिया।

शीला : कहां है?

वर्मा : ऐसे नहीं दिखाई देगा। आंखें मूंदो, देखो कैसा जादू होता है।

शीला : (आंखें मूंदकर) लो…

वर्मा शीघ्रता से मेज के सहारे बाहर की ओर रखा बोर्ड उठाकर सामने करता है।

वर्मा : लो, अब आंखें खोलो।

शीला : (आंखें खोलकर, प्रसन्न होकर) ओ…यह तो

नहीं वल्कि अब से इसे दुकान न कहना। या तो हास्पीटल कहो या डिस्पेंसरी कह सकती हो। इससे भी सम्मान की मात्रा बढ़ती है।

शीला : (हँसकर) अभी-अभी तुम डाक्टरी कर रहे थे परन्तु अब देख रही हूँ कविता भी करने लगे हो।

वर्मा : (हँसकर) बस देखती जाओ, मैं क्या-क्या करता हूँ।

शीला : अच्छा डाक्टर साब, यह नुस्खा, बताओ तो कहाँ से हाथ लगा ?

वर्मा : (मेज की ओर संकेत करके) इन दवाइयों को देख रही हो।"'अभी-अभी एक दवाइयों का एजेंट आया था। बड़ा घिसा हुआ है। वह यह सब नुस्खे बता गया है। कहता है मैं आपकी डाक्टरी को चमका दूँगा। उसने भी मेरे ठाट-वाट को सराहा है। इस ठाट-वाट को कोरा न समझो। यह ठाट-वाट बड़ा चमत्कार दिखाता है। हेमराज को देखो जो अब डाक्टर हेमराज बना वैठा है। इसका बाप पंसारी था। अर्क शरवत की बोतलें रखता था। क्या हुआ दिन में रुपया, डेढ़ आ गया। जब वह मरा तो इसने दुकान का रंग-ढंग भी बदल दिया। धोती के स्थान पर कोट-पतलून पहन ली। चौकी का स्थान मेज-कुर्सी ने ले लिया और बड़ा-सा वोर्ड लगवा दिया डा० हेमराज मैडिकल प्रैक्टिश्नर। मुझे ऐसा विचार ही न आया था। उस दिन मैं

उसकी दुकान से गुजरा तो उसका बोर्ड देखकर उसकी सारी कहानी मेरे सामने आ गई। तभी मुझे यह नुस्खा हाथ लगा। मैंने सोचा मैं भी ऐसा क्यों न कर लूं।

शीला : पैसा कहीं से लिया था ?

वर्मा : उधार ! घबराने की बात नहीं। प्रैक्टिस चलने पर एक-दो मास में ही उतर जाएगा।

शीला : कितना लिया ?

वर्मा : एक सौ।

शीला : सारा खर्च हो गया ?

वर्मा : हाँ ! केवल दस रुपये बचे हैं।

जेब में से नोट निकालता है और फिर जेब में डाल लेता है।

शीला : जब इतना खर्च किया तो बोर्ड भी बनवा लेना था।

वर्मा : बनवा भी लिया।

शीला : कहाँ है ?

वर्मा : ऐसे नहीं दिखाई देगा। आँखें मूंदो, देखो कैसा जादू होता है।

शीला : (आँखें मूंदकर) लो…

वर्मा शीघ्रता से मेज के सहारे बाहर की ओर रखा बोर्ड उठाकर सामने करता है।

वर्मा : लो, अब आँखें खोलो।

शीला : (आँखें खोलकर, प्रसन्न होकर) ओ…यह तो

बहुत सुन्दर है।

वर्मा : (सगर्व) कैसे ? फिर जरा पढ़कर देखो… (स्वयं पढ़ना जोर से) कविराज डा० एन० आर वर्मा एल० एम० एस०, के० टी० जे०, एम० बी० (होमो, कलकत्ता) क्यों अब बोलो ? कैसा बनवाया है ?

शीला : सो तो ठीक है ! पर यह समझ में नहीं आया कि तुम कविराज हो या डाक्टर ?

वर्मा : (हँसकर) दोनों ही। कविराज भी और डाक्टर भी।

शीला : यह कैसे हो सकता है ? कविराज तो वह होते हैं जो देशी दवाइयाँ रखते हैं जैसे कविराज लेखराज।

वर्मा : और डाक्टर वह होते हैं जो अंग्रेजी दवाइयाँ रखते हैं। इसीलिए मैं देशी भी हूँ और अंग्रेजी भी।

शीला : ऊँहूँ यह कविराज-वविराज मुझे पसंद नहीं, केवल डाक्टर ही ठीक है।

वर्मा : यहाँ पसंद की बात थोड़े ही है ?

शीला : तो फिर किसकी है ?

वर्मा : यह तो चालें हैं चालें। आजकल चालों के बिना दुनिया मानती कहाँ है ?

शीला : वाह, भला यह भी कोई चाल है ?

वर्मा : हाँ ! सुनो, संसार में सभी लोग ऐसे नहीं जो केवल अंग्रेजी इलाज को चाहते हैं। यदि ऐसा होता तो यह वैद्य-हकीम भूखे मर गए होते। उनकी संख्या

कम नहीं जो देशी इलाज को डाक्टरी इलाज से अच्छा समझते है।

शीला : परन्तु तुम्हारे पतलून-कोट से तुम्हें वैद्य समझेगा ही कौन ?

वर्मा : तुम्हें कुछ भी पता नहीं। आज के लोग ऐसे हैं कि चाहे वह औषधियां देशी ही सेवन करना पसंद करें पर ठाठ अवश्य ही अंग्रेजी पसद करते है। एक मैले धोती-कुर्ता वाले वैद्य के पास थोड़ा पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी बैठना पसंद नही करेगा, चाहे वह देशी औषधियों का कितना ही हामी क्यों न हो। अंग्रेजी ठाठ का भारतीयों पर जादू है जादू। वस्तु चाहे कहीं की हो उस पर लेवल अंग्रेजी अवश्य होना चाहिए, नहीं तो उसको कोई न पूछेगा।

शीला : (मुस्कराकर) अच्छा तो तुमने अपने पर अंग्रेजी लेवल लगाया है ?

वर्मा : (हँस कर) यूँही समझ लो।

शीला : तो क्या तुम दोनोंप्रकार की ही औषधियाँ रखोगे ?

वर्मा : दोनों प्रकार की नहीं वलिक चारों प्रकार की।

शीला : चारों प्रकार की ?

वर्मा : हाँ, एक अंग्रेजी, एक देशी, एक यूनानी और एक होम्योपैथिक।......हैरान क्यों हो रही हो ? यही आज की नई डाक्टरी है। आजकल के अधिकतर डाक्टरों ने यदि चारों नहीं तो दो को तो अवश्य इकट्ठा जोड़ा हुआ है।

शीला : और वह दोनों ही इलाज कर लेते हैं ?

वर्मा : कर लेते हैं तभी तो रखते हैं ।
शीला : दोनों का कैसे करते होंगे ?
वर्मा : जैसे मैं चारों का करूँगा । इसमें हैरान होने की कोई बात नहीं । आजकल की पेटेंट दवाइयों ने डाक्टरी को तो बहुत आसान बना दिया है । तभी तो मैंने यही धंधा अपनाया है । आजकल की सभी साधारण सी बीमारी से लेकर भयानक बीमारी तक के लिए पेटेंट दवइयाँ मिल जाती हैं । जैसे कहीं पे दर्द या नज़ला-जुकाम हो उसे एनासिन, एस्प्रो, कोडोपाइरीन और सैरीडोन में से कोई सी भी गोली दे दो । जुशांदा दे दो । यदि अजीर्ण या अपच से पीड़ित हो तो फौरन हाजमो, लवणभास्कर, हिंग्वाष्टक या मिल्क मैगनीसिया में से कोई सी दे दो और बस ! यदि ज्वर है तो ऋतु अनुसार अर्क शर्बत दे दो या कुनीन की गोलियाँ दे दो । और फिर इंजेक्शन अर्थात् टीका तो आज का अद्‌भुत चमत्कार है । दाढ़ दुखे तो टीका करो, आँख दुखे तो टीका करो, सिरदर्द है तो टीका, कब्ज है तो टीका, पेचिश है तो टीका, जुकाम है तो टीका, गर्मी है तो टीका और सर्दी है तो टीका ! बुखार है तो टीका घाव है तो टीका । अर्थात् कोई भी बीमारी या तकलीफ हो तो झट टीका लगाओ और जितना जी चाहे ऐंठ लो । कल जो रोगी आया था उससे ऐसे ही तो छः रुपये लिए थे । एक टीका लगाया, चार गोलियाँ दे दीं, और बस !

शीला : ये दवाइयाँ तो ऐसी है जिन्हें सब कोई जानता है। फिर वह तुमसे क्योंकर लेंगे ?

वर्मा : यही तो बात है। यदि सब घर पर ही इलाज कर लेते तो डाक्टरों को कौन पूछता ?

शीला : डाक्टरों के पास तो लोग ऐसे इलाज की आशा लेकर जाते हैं जो वह स्वयं घर पर नहीं कर सकते। यदि वे तुम्हारे पास आए और तुमने भी उन्हें वही गोलियाँ दी तो फिर तुम्हारे पास आएगा कौन ?

वर्मा : (हँसकर) तुम क्या समझती हो कि मैं जो कुछ दूंगा वह उनको पता चल जाएगा कि कौनसी दवाई मैंने उनको दी है।...अच्छा तुम्हीं बताओ, तुम जब कभी डाक्टर से कोई खाने की दवाई लाती हो तो क्या तुम जान पाती हो कि कौनसी दवाई है ?

शीला : नहीं...।

वर्मा : पता है क्यों ?......यह इसलिए कि डाक्टर लोग गोलियाँ पीसकर देते हैं ताकि दूसरों को पता ही न चले कि यह कौनसी गोलियाँ हैं।

शीला : पर मैं तो कई बार साबत गोलियाँ भी लाई हूँ।

वर्मा : वह केवल वही गोलियाँ साबत देते हैं जिन पर कोई भी निशान न हो जिससे साधारण जनता झट पहचान ले कि वह अमुक गोली है।

शीला : (हँसकर) कमाल है! अच्छा तो तुम यह सारी कलाबाजियाँ सीख चुके हो ?

वर्मा : अरी पगली डा० भाटिया के पास आठ साल कंपौं-

डरी करके मैंने झक नहीं मारी है। ऐसे सभी टैक्ट नोट करता रहा हूं !

शीला : (हँसकर) अच्छा, भला केवल गोलियों से निपटारा थोड़े ही हो जाएगा ? डाक्टर पीने की दवाई भी तो देते हैं।

वर्मा : वह तो मैं पहले ही बता चुका हूं कि अर्क शरबत दूंगा। और फिर एक विशेष प्रकार की तरल औषधि तैयार की जाती है जिसे अंग्रेजी में मिक्श्चर कहते हैं। वह मिक्चश्र हर एक की शीशी में तीन खुराक का भर दिया और बस।

शीला : (हँसकर) और यदि कोई बीमारी समझ हो न आए डाक्टर साब की खोपड़ी में, तब ?

वर्मा : तब भी घबराने की कोई बात नहीं। होम्योपैथी जीती रहे। होम्योपैथी की कोई भी दवाई किसी भी बीमारी में दे दो, बस ठीक है। यदि वह कुछ भी लाभ नहीं पहुँचाएगी तो कोई बात नहीं। उसमें एक विशेष गुण होता है कि वह किसी प्रकार की हानि नही पहुँचाती। तो बस चार-पांच औष-धियाँ बदलकर एक्सपेरिमेंट करते रहो ?

शीला : तो आप लोगों के जीवन से खिलवाड़ करेंगे।

वर्मा : तो क्या होगा ? उनकी कोई हानि थोड़े ही होगी ? हाँ, अपने को लाभ यह होता है कि अभ्यास हो जाता है और अभ्यास और अनुभव से मनुष्य निपुण हो जाता है !

दोनों हँसते हैं।

: (बाहर की ओर देखकर गम्भीर होकर) देखो, शायद कोई मरीज इधर ही आ रहा है।

शीला : अच्छा मैं जाती हूँ।

वर्मा : ठहरो ! यहीं बैठी रहो। उस पर प्रभाव डालने के लिए तुम जरा रोगी का काम करो।

शीला : (घबराकर) मैं ?

वर्मा : हाँ-हाँ ! बोलो नहीं ! जैसे मैं कहूँ, हाँ मिलाती जाना।

एक बुढ़िया एक हाथ मे ४ वर्ष के बच्चे को सँभाले और दूसरे हाथ में शीशी लिए प्रवेश करती है।

: आइए जी, बैठिए……(पत्नी से) हाँ ! आज आपका क्या हाल है ?

शीला : (सँभलते हुए) अजी ! कल से तो बहुत कुछ आराम है।

वर्मा : हूँ ! कल तो आपका सारा शरीर तवे की तरह तप रहा था। अग-अंग दुख रहा था। न बैठा जाता था न लेटा ! क्यों जी ? अब तो मुझे ऐसा लग रहा है, जैसे आप काल के पंजे से वापस आई हैं। क्यों जी ?

शीला : जी हाँ।

वर्मा : अजी यह तो आप बहुत दिनों के बाद यहाँ आई है। बेकार के डाक्टरों-वैद्यों के पास समय बर्बाद करती रहीं ! यदि शुरू-शुरू में यहीं आ जातीं तो मैं शुरू-शुरू में ही रोग को दबा देता !

शीला : (सँभलकर) जी हाँ, बहुत समय भी गँवाया और पैसा भी।

वर्मा : अच्छा, अभी उस बेंच पर बैठिए। मैं और अच्छी प्रकार से देखूंगा। इतने में मैं जरा इनको निबटा लूं! (बुढ़िया से) हाँ जी, आइए।

बुढ़िया : अजी पहले इनको ही निबटा लीजिए!

वर्मा : इनको तो बहुत देर लगेगी, आप आइए।

शीला को जाने का इशारा करता है।

शीला : जी हाँ, मैं अभी बैठी हूँ।

उठकर दूसरी बेंच पर जाती है।

वर्मा : (बुढ़िया से) आइए! इस कुर्सी पर ले आइए बच्चे को।

बुढ़िया बताई हुई कुर्सी पर बैठती है।

: हाँ जी! क्या है इस बच्चे को?

बच्चे की नाड़ी देखता है।

बुढ़िया : अजी पता नहीं इसे क्या हो गया है? न कुछ खाता है न दूध पीता है। सारा-सारा दिन भूखा रहता है। दिन पर दिन सूखता जा रहा है! हकीम-वैद्यों को दिखाया, पर किसी की समझ में बीमारी आई नहीं! बहुत परेशान हूँ!

वर्मा : हुँ! (पेट आदि देखकर) रोग काफी पेचीदा है। भला छोटे-छोटे वैद्यों, हकीमों को इसकी क्या समझ आ सकती थी! (बच्चे को देखते हुए) हम लोगों में यही एक बड़ी त्रुटि है कि हम रोग का शुरू-शुरू में अच्छा इलाज नहीं कराते। जब रोग

वढ़ जाता है तव पछताते हैं और वड़े-वड़े डाक्टरों के पास भागते हैं ! यदि शुरू में ही एक अच्छे डाक्टर को दिखाया जाए तो रोग वढ़े ही क्यों ?

बुढ़िया : (घबराकर) इसको कौन-सा रोग है, डाक्टर साव ?

वर्मा : (स्टैथेस्कोप लगाते हुए) अजी, यह रोग आजकल बच्चों में खूब फैला हुआ है । मैं वच्चे को देखते ही समझ गया था कि वही रोग है।मेरे पास अभी-अभी तीन मरीज आए थे । पूछिए इनसे, कल दो मरीज इनके सामने ही आए थे। आज वे वच्चे बिल्कुल ठीक खाते-पीते, हँसते-खेलते हैं । बीमारी को कभी छोटा मत जानिए ।""कितने दिन हो गए इसे इस दशा में ?

बुढ़िया : (घवराए हुए) कोई पंद्रह दिन ।

वर्मा : (आँखें और जीभ देखते हुए और पर्ची पर लिखते हुए) और यही पंद्रह दिनआपने इधर-उधर गँवाए। भला वैद्य-हकीम इन वीमारियों का क्या इलाज करें ? उनसे तो अर्क शरवत ले लो ।""अव जब वीमारी वढ़ गई तो आप मेरे पास आई ।

बुढ़िया : (घबराकर) जी ? तो क्या""?

वर्मा : नहीं"नहीं" घवराने की कोई वात नही ! यहाँ तो पुरानी से पुरानी वीमारो भी पकड़ ली जाती है। अजी शुरू-शुरू में तो सव डाक्टर रोगको पकड़ लेते हैं। असली डाक्टर वही है जो विगड़ी वीमारी को पकड़े । खैर ! अव आप यहाँ आ गई हैं। अब किसी प्रकार की चिन्ता न करें। यहाँ जो

आ गया समझिए उसका बेड़ा पार है। (शीला की ओर इशारा करके) पूछिए इनसे, इनका रोग कैसे बिगड़ गया था। आप तो केवल वैद्य-हकीमों तक ही गई थी ! यह तो बड़े-बड़े डाक्टरों तक घूम आई थीं पर किसी की समझ में रोग आ ही नहीं रहा था ! यहाँ आईं तो मैं देखते ही रोग पहचान गया। इलाज शुरू किया। अब भगवान की दया है ! पूछिए इनसे ? (शीला से) कहिए न आप, क्या दशा थी आपकी।

शीला : (घबराते हुए) जी हाँ, मैं तो समझ चुकी थी कि आज गई और कल गई। यहाँ तो बिल्कुल निराश होकर आई थी। यहाँ पता नहीं, इन्होंने क्या जादू किया कि अब जीने को आस बँध गई है।

वर्मा : (सगर्व) अजी मैं क्या कर सकता हूँ। करने वाला तो वही है।

बुढ़िया : फिर भी एक सियाना डाक्टर भी तो रोगी के लिए भगवान से कम नहीं।

वर्मा : जी हाँ, जी हाँ···क्यों नहीं।

बुढ़िया : अच्छा डाक्टर साब ! इसे बीमारी क्या है ?

वर्मा : अजी आप घबराइए नहीं। इसे···अँग्रेजी बीमारी है। कुछ देर तो लगेगी, पर रोग को जड़ से उखाड़ दूंगा।

बुढ़िया : पर इस रोग का नाम भी तो कुछ होगा।

वर्मा : मैंने कहा न कि अँग्रेजी बीमारी है। आपको

नाम-वाम समझ में नहीं आएगा। और फिर आपको इलाज से मतलब है, बीमारी का नाम कुछ भी हो।…हाँ…तो यह बताइए कि प्यास इसे लगती है ?…देखिए, मैं जरा थोड़ी-सी बातें पूछूंगा जिनका उत्तर मुझे पूरा मिलना चाहिए। हाँ, तो प्यास ?

बुढ़िया : जी हाँ, बहुत…

वर्मा : तो यह खूब पानी पीता है ?…

बुढ़िया : जी हाँ, पानी तो पीता ही है।

वर्मा : कितना पानी एक बार में पी जाता है ?

बुढ़िया : जी…? पी जाता है…कोई नाप-तोलकर तो देखा नहीं।

वर्मा : अच्छा पानी कटोरी में पीता है या गिलास में ?

बुढ़िया : अजी इसका बीमारी से क्या मतलब ? पानी पीता है, चाहे कटोरी में पीए या गिलास में।

वर्मा : ओ हो ! आप समझीं नहीं। मेरा मतलब कटोरी या गिलास से नहीं, पानी की मात्रा से है। आपको बताने में क्या हर्ज है ?

बुढ़िया : हर्ज तो कुछ नहीं। · पानी…यह न कटोरी में पीता है न गिलास में। चाय वाले प्याले में पीता है।

वर्मा : अच्छा ! सारा प्याला पीता है या आधा ?

बुढ़िया : (कुढ़कर) सारा तो नहीं कुछ कम ही पीता है।

वर्मा : ठहरिए (उठते हुए, फिर बैठकर शीला से) देखिए जी, आप जरा यहीं अन्दर से एक चीनी

का प्याला उठाने का कष्ट करेंगी !

शीला प्याला लाती है।

वर्मा : जरा पानी भी भरकर दे दीजिए।

शीला साथ पड़े एक जग से पानी भरकर देती है।

: धन्यवाद ! (प्याले का थोड़ा-सा पानी फेंककर) हाँ जी, तो इतना तो देती ही होंगी ?

बुढ़िया : जी नहीं, इससे थोड़ा कम।

वर्मा : (थोड़ा और फेंककर) इतना ?

बुढ़िया : आपने बहुत कम कर दिया।

वर्मा : अच्छा, ठहरिए (उठकर उसमें और पानी भरकर) यह लीजिए, इतना ?

बुढ़िया : (मुस्कराकर) जी, यह तो ज्यादा हो गया है।

वर्मा : अ्···अच्छा···देखिए, मैं आपके सामने थोड़ा-थोड़ा पानी फेंकता हूँ, जितना ठीक हो, वहाँ पे मुझे रोक दीजिए। (थोड़ा-थोड़ा फेंकते हुए) जी ? इतना···इतना···इतना···

बुढ़िया : बस बस···।

वर्मा : अच्छा तो इतना पानी एक बार में पी लेता है ?

बुढ़िया : जी हाँ, लगभग। नाप-तोलकर तो कभी देखा नहीं।

मुस्कराती है।

वर्मा : बस-बस, यही ठीक है। (पर्चो पर कुछ लिखता है) अजी बात यह है कि जब तक पूरे सिमटम्स, मेरा मतलब है, पूरे चिह्नों का ज्ञान न हो, तब

तक बीमारी का ठीक इलाज नहीं हो सकता। डाक्टरी करना कोई खालाजी का घर नहीं! रोगी को पूरी प्रकार से पढ़ना पढ़ता है। मैं उन डाक्टरों में से नहीं हूँ कि बस पूछा बुखार है और झट मिक्श्चर दे दिया। वास्तव में रोग की जड़ तक पहुँचना चाहिए।

बुढ़िया : जी हाँ, रोगी की दशा पूरी प्रकार से जानकर ही तो उसका ठीक प्रकार से इलाज हो सकता है।

वर्मा : यह! आपने लाख रुपये की बात कही।...अच्छा, थोड़ा-सा कष्ट और दूँगा। अब यह बताइए कि इसे पेशाब कैसा आता है?

बुढ़िया : (हैरान होकर) ठीक आता है।

वर्मा : हूँ। मेरा मतलब है कि किस रंग का आता है? सफेद, पीला, शर्बती, लाल, कत्थई...

बुढ़िया : अजी इतना ध्यान तो कभी नहीं दिया।

वर्मा : न न, फिर भी आप देखती तो होंगी?

बुढ़िया : जी? मेरा विचार है, गाढ़ा पीला ही होता है।

वर्मा : हूँ! गाढ़ा पीला...(लिखना) अब यह बताइए कि कितनी मात्रा में आता है?

बुढ़िया : जी?...

वर्मा : मेरा मतलब यह है कि कितना आता है?

बुढ़िया : अजी यह कैसे कहा जा सकता है?

वर्मा : अ् अच्छा न सही। इतना तो पता चल जाता है कि थोड़ा आता है या खुलकर पर्याप्त मात्रा में आता है?

बुढ़िया : जी ! आता खुलकर है।

वर्मा : ठीक (लिखना) अब यह बताइए कि दिन में कितनी बार आता है ?

बुढ़िया : कमाल है ! ...

वर्मा : (घबराकर) अ...मेरा मतलब है बार-बार आता है या एक-दो बार ?

बुढ़िया : गिना कभी नहीं। यही कोई छः-सात बार आ ही जाता है।

वर्मा : ठीक (लिखना) अ...अब...

बुढ़िया : अजी आप तो बाल की खाल उतारते हैं। आप तो अच्छे-भले आदमी को रोगी बना देते हैं।

वर्मा : (खिसियानी हँसी हँसकर) घबराइए नहीं। और कुछ मत बताइए। बस ! इतने से ही काम चल जाएगा।

एक कागज पर उल्टी-सीधी रेखाएँ डालकर उसमें कुछ लिखता है।

वर्मा : शीशी लाई हैं ?

बुढ़िया : जी ! यह है।

वर्मा : यह तो एक है। दो चाहिए। कोई बात नहीं, मैं दूसरी दे देता हूँ।

पर्ची और दूसरा कागज और शीशी उठाकर डिस्पेंसरी में चला जाता है।

बुढ़िया : (शीला से) आपको कौनसा रोग था ?

शीला : (घबराकर) जी ? था ऐसे ही...जनाना रोग था।

बुढ़िया : तो उसके लिए तो आपको किसी लेडी डाक्टर या नर्स के पास जाना चाहिए था। स्त्रियों के गुप्त रोगों को भला यह डाक्टर क्या जानें, और फिर आपने बताया कैसे होगा ?

शीला : (घबराकर) जी ? कोई विशेष गुप्त नही था। ऐसे ही था।

बुढ़िया : ऐसे का क्या मतलब ? आखिर था तो कोई जनाना रोग ही ?

शीला : (और घबराकर) जी ?...नहीं कोई जनाना रोग नहीं था।

बुढ़िया : अभी तो आपने कहा कि जनाना रोग था।

शीला : (घबराते हुए) जी, वह ऐसे ही मुंह से निकल गया। मुझे वास्तव में...

वर्मा : **(दवाई की दो शीशियाँ, गोलियाँ और पर्चो आदि लेकर डिस्पेंसरी से बाहर आकर)** यह लीजिए जी। यह हैं गोलियाँ, दो प्रकार की। एक यह हैं जो आधे-आधे घंटे बाद दो-दो करके चूसने के लिए हैं, देनी हैं। फिर यह गोलियाँ, एक-एक करके पानी के साथ देनी है, दो-दो घंटे बाद। एक बार गोलियाँ, एक बार यह शीशी की दवाई। हाँ ! इसमें जो सफेद गोलियाँ हैं वह पहले और जो नसवारी हैं वह बाद में। यह एक और दवाई है, जो इसे जब प्यास लगे तो पानी में थोड़ी-सी डालकर पिला दीजिए।

बुढ़िया : (मुस्कराकर) अजी यह तो घर जाते ही मुझे

सब भूल जाएगा। आप एक कागज पर लिख दें तो ठीक रहेगा।

वर्मा : (हँसकर) अच्छा जी··· (एक कागज पर एक-एक दवाई देख-देखकर लिखना) हूँ! यह लीजिए, सब कुछ लिख दिया है।

बुढ़िया : (सब सँभालते हुए) अच्छा जी, कितने पैसे ?

वर्मा : जी···यह कोई चार रुपये दे दीजिए।

बुढ़िया : (हैरान होकर) चार रुपये···!

सब कुछ मेज पर छूट जाता है।

वर्मा : जी ! कुछ अधिक तो नहीं माँगे। दो रुपये तो केवल दवाई के हैं।

बुढ़िया : (हैरानी से) दो रुपये दवाई के ?

वर्मा : (घबराकर) जी हाँ।···

बुढ़िया : दो रुपये ? बड़े-बड़े डाक्टर भी एक से अधिक नहीं लेते और आपने कल दुकान खोली और आज···

वर्मा : अजी सुनिए तो···मैं···

बुढ़िया : कमाल कर दिया आपने ? आपके अड़ोस-पड़ोस वाले अच्छे-अच्छे डाक्टर भी आठ आने से अधिक नहीं लेते।

वर्मा : (घबराकर) अजी सुनिए तो···वे इतनी दवाइयाँ भी तो नहीं देते। मैंने दवाइयाँ भी तो कई प्रकार की दी हैं।

बुढ़िया : यह तो एक प्रकार का पैसे बटोरने का ढंग है। चार-छः प्रकार की दवाइयाँ देकर दो-ढाई रुपये

बटोर लिए, चाहे वे दवाइयाँ काम की हों या नहीं। इससे अच्छा होता मैं दरियागंज वाले डा० गुप्ता के पास जाती। वह इतना बड़ा डाक्टर होकर भी एक रुपये से अधिक कभी नहीं लेता।

वर्मा : (सँभलकर) ओहो! आप तो ऐसे ही नाराज हो रही हैं। आपका और हमारा तो अब आपस का व्यवहार चलना ही है। चलिए, आप एक रुपया ही दे दीजिए। पड़ोसियों से बिगाड़ना थोड़े ही है।

बुढ़िया : (पर्स पकड़कर) परन्तु आपने तो चार रुपये माँगे थे। दो रुपये और किस बात के?

वर्मा : (झिझकते हुए) यह दो रुपये और बताऊँगा तो आप फिर बिगड़ेंगी। क्या करें, अपना-अपना ढंग होता है इलाज करने का। चलतू इलाज करने की अपनी आदत नहीं। मैं हर केस में पूरी लगन से काम करता हूँ और यदि उस लगन और परिश्रम के थोड़े-से पैसे चार्ज करता हूँ तो क्या बुराई है?

बुढ़िया : कौनसा परिश्रम?

वर्मा : देखिए, मैं साधारण प्रकार से इलाज नहीं करता हूँ। जब तक मैं बीमारी की जड़ तक न पहुँच जाऊँ, तब तक मैं केस हाथ में नहीं लेता। यह तो आपने देख ही लिया है कि मैं कैसी सूक्ष्मता से बीमारी की जाँच करता हूँ। छोटी-छोटी बात पूछता हूँ। क्योंकि अपना तो विश्वास है कि

यदि बीमारी को जड़ से न खोद डाला तो इलाज क्या किया ? और सूक्ष्मता से निरीक्षण किए बिना बीमारी को जड़ से खोदना असम्भव है।

बुढ़िया : आप कहना क्या चाहते हैं ? साफ-साफ कहिए।

वर्मा : (झिझकते हुए) वह तो स्पष्ट है ही। मैंने आपसे केवल चार रुपये माँगे हैं। दो रुपये दवाई के और दो रुपये चार्ट के।

बुढ़िया : चार्ट के ?...

वर्मा : जी हाँ, इसी चार्ट के, जो आपसे इस बच्चे की सारी दशा सुनकर मैंने तैयार किया है ? देखिए आपके सामने है।

कागज आगे रखता है।

बुढ़िया : यह चार्ट है ? और इसके दो रुपये माँगते हो ?

वर्मा : अजी यह तो अभी बच्चा है, इसका चार्ट भी छोटा बना है। इनसे पूछिए (शीला की ओर संकेत करके) इनके चार्ट के मैंने चार रुपये चार्ज किए थे। और फिर यह कोई रोज-रोज थोड़े ही देने पड़ते हैं ? एक बार चार्ट बन गया, बस ! फिर केवल दवाई ही दवाई ली।

बुढ़िया : तो इस चार्ट का हमें क्या लाभ है ?

वर्मा : लाभ यह है कि इससेइलाज ठीक प्रकार से होता है।

बुढ़िया : इलाज तो आपने करना है, और यह चार्ट तो आपके ही लिए है ताकि आप इसके अनुसार दवाई देते रहें।

वर्मा : पर चार्ज तो आप लोगों से ही करना पड़ता है।

बुढ़िया : इसका मतलब है कि तुम इलाज के बहाने कई-कई प्रकार की व्यर्थ-सी चीजें बनाकर रोगियों को लूट लो।

वर्मा : (घबराकर) लूट लूं ?...

बुढ़िया : लूटते नहीं तो और क्या है ? बाकी डाक्टर जो दवाई की पर्ची बनाते है, क्या उससे इलाज अच्छी प्रकार से नहीं होता ? क्या वे उस पर्ची के रोगियों से पैसे लेते है ?

वर्मा : (घबराकर) अजी सुनिए...यह तो अपने-अपने इलाज करने की विधि है।

बुढ़िया : अजी विधि भी तो कुछ ढंग की होनी चाहिए या यूं ही ?

वर्मा : (हारकर) अच्छा माताजी, आपसे विगाड़नी तो है नहीं। यदि आप नाराज होती हैं तो लीजिए, इसका भी एक ही रुपया दे दीजिए, बस !

बुढ़िया : यह भी आपकी ज्यादती है।

पल्ले से पैसे खोलना शुरू करती है।

वर्मा : अभी भी आपको ज्यादती लग रही है ? मैंने तो आपका इतना लिहाज किया।

बुढ़िया : (धीरे से) क्या लिहाज किया ?

पैसे खोलकर गिनती है। एक देहाती व्यक्ति का बच्चे को उठाए और दवाइयां लिए प्रवेश। साथ में एक व्यक्ति लट्ठ उठाए है।

वर्मा : (बुढ़िया से हटकर उन व्यक्तियों की ओर) आइए जी !

बच्चेवाला : (क्रोध में) क्या खाक आएँ ? (चिढ़कर) आइए जी, आइए जी···बड़े डाक्टर बने फिरते हो। बच्चे का सत्यानाश कर दिया।

वर्मा और शीला घबराते है। बुढ़िया हैरानी से देखती है।

वर्मा : जी बात क्या है ?

लट्ठवाला : बात क्या होनी है ? (लट्ठ दिखाकर) लग जाए तो पता चल जाए तुम्हें कि क्या बात है !

वर्मा : (डरकर) भाई साहब, कुछ बात बताएँगे तो पता चलेगा।

बच्चेवाला : बात क्या बताएँगे (बच्चे की बाँह दिखाकर) यह देखो बच्चे का हाल। कल शाम से इसे एक पल भी आराम नहीं मिला। सारी रात दर्द से चिल्लाता रहा है। न आप सोया न हमें सोने दिया।

लट्ठवाला : डाक्टरी का मतलब यही है कि छोटे-छोटे बच्चों के जीवन से खिलवाड़ करो ?

वर्मा : पूरी बात तो बताइए भाई साहब !

बच्चेवाला : इस बच्चे को देख रहे हो ? इसकी बाँह को देख रहे हो ? कितनी फूली हुई है।

वर्मा : जी हाँ, देख रहा हूँ। क्या हुआ है इसकी बाँह को ?

लट्ठवाला : अच्छा ? तुम्हें पता ही नहीं क्या हुआ है ? अभी

एक लट्ठ मारकर सिर खोल दूँ तो पता चलेगा।

लट्ठ दिखाता है। वर्मा घबराकर पीछे हटता है।

शीला : (आगे आकर) अजी सुनिए, क्या बात है ? पहले बात तो बताइए।

बच्चेवाला : अजी बहन जी, क्या बात बताएँ ? इस बच्चे को कुछ तकलीफ थी। हमने सोचा पड़ोस में डाक्टर आया है, इसको दिखा दें। कल शाम को दिखाया तो इसने कहा टीका लगवा लो। हमने कहा लगा दो। इसने टीका लगाया तो टीके की दवाई फैली नहीं, एक जगह पर इकट्ठी हो गई और गिल्टी हो गई है, देखिए… (दिखाना) … जब इसे टीका लगाना नहीं आता था, तो इसने टीका लगाया क्यों ?

लट्ठवाला : अजी पहले तो इधर-उधर की बातें करके बाल की खाल उतारता रहा, कि पानी कितना पीता है ? पेशाब कितना करता है ? फिर कागज पर उल्टी-सीधी लकीरें डालकर चार्ट बनाता रहा। हमें सीधा-सादा देहाती समझकर छः रुपये बटोर लिए। कहता था, इलाज करने का मेरा अपना ढंग है। दो रुपये टीके के लिए, दो रुपये दवाई के लिए और दो रुपये चार्ट के भी ले लिए। अब हम इसे बताएँगे कि देहातियों को सीधा समझकर लूटने का क्या मजा होता है।

शीला : अजी, डाक्टर कोई भगवान तो होता नहीं।

उससे भी तो गलती हो सकती है ?

बच्चेवाला : अजी उस समय तो यह भगवान से भी बढ़कर बातें करता था।

शीला : अजी गलती इंसान से होती है।

वर्मा : (सँभलकर) अजी बच्चा है। टीका लगाते समय हिल गया होगा।

लट्टूवाला : तो तुम डाक्टर किस बात के हो जो टीका लगाते समय तुम बच्चे को सँभाल भी नहीं सकते? और बच्चे की जो दशा हुई है, उसका कौन जिम्मेदार है ?

बुढ़िया : (चिढ़ाते हुए) अजी ! चार्ट से इलाज जो ठीक प्रकार से होता है।

बच्चेवाला : खाक ठीक प्रकार से होता है !

बुढ़िया : यह डाक्टर साब तो यही समझते हैं न। मेरे बच्चे का भी यही केस है। अच्छा हुआ जो मैंने टीका नहीं लगवाया। मुझसे भी चार्ट के दो रुपये माँग रहे है।

पैसे पल्ले में बाँधती है।

लट्टूवाला : यह सब लूटने की चालें हैं, जैसे बड़ा सिवल सर्जन बन गया हो।

बुढ़िया : अजी सिवल सर्जन भी चार्ट-वार्ट कहाँ बनाते हैं ? और कब चार्ट वार्ट के पैसे बटोरते हैं ?

बच्चेवाला : बस जी, यह तो केवल चार्ट बनाना ही जानते है, इलाज करना आए चाहे न आए।

बुढ़िया : अजी इलाज करना चाहे न आए, पैसे लूटना तो

अच्छा आता है।

लट्टूवाला : अजी पैसे लूटने का तो मैं अभी मजा चखा देता हूँ।

लट्टू उठाता है।

शीला : अजी लड़ाई-वड़ाई से क्या लाभ है ?·· अच्छा अब आप चाहते क्या हैं ? यह बताइए।

बच्चेवाला : बच्चे का केस खराब कर दिया।

लट्टूवाला : हम तो पुलिस में जाएँगे और हम कुछ नहीं चाहते।

वर्मा और शीला घबराते हैं।

शीला : (चौंककर) अजी बात बढ़ाने का कुछ लाभ नहीं है। डाक्टर साहब से गलती हो गई है। अब आप यूँ करिए, अपने पैसे वापस ले लीजिए, और क्या ?

बच्चेवाला : अजी पैसे वापस लेने से बच्चा ठीक थोड़े ही हो जाएगा ?

शीला : पुलिस में जाने से भी तो बच्चा ठीक नहीं हो जाएगा ?

लट्टूवाला : पर ऐसे डाक्टरों के तो होश ठिकाने आ जाएँगे।

शीला : अजी, डाक्टर साब अपनी गलती अनुभव कर रहे हैं। गलती इंसान से ही होती है।

बच्चेवाला : वह तो आपकी बात ठीक है, पर हमें इनकी बातों पे गुस्सा आता है।

शीला : अजी बातें ऐसी होती ही रहती हैं, आप मेरी बात बात मानिए।

बच्चेवाला : अच्छा वहनजी, आपके कहने से हम मान जाते हैं। दिलवाइए, पैसे ताकि हम किसी और डाक्टर को दिखा सकें।

लट्टूवाला : हम हर्जाना भी साथ लेंगे।

शीला : अच्छा डाक्टर साव आप, इनको आठ रुपये दे दीजिए।

वर्मा : (हैरानी से) हूँ ''आठ रुपये ?

शीला : जी हाँ ठीक है (इशारा करके) झगड़े से कोई लाभ नहीं।

वर्मा : (धीरे से) अच्छा (जेब से दस का नोट निकालकर) यह लीजिए।

शीला को देता है।

शीला : यह लीजिए।

बच्चेवाले को देती है।

बच्चेवाला : (लेकर) दो रुपये मेरे पास नहीं हैं।

लट्टूवाला : दस रुपये ही ठीक हैं। वापस हम कुछ नहीं देंगे।

वर्मा : (घबराकर) दस रुपये ?

लट्टूवाला : वहन जो न होतीं, तो आज मैं खोपड़ी खोल देता।

जाने लगता है।

शीला : इस वच्चे को दवाई तो लगवाते जाइए।

बच्चेवाला : अजी वस ऐसे ही रहने दीजिए, आपका धन्यवाद!

बुढ़िया : चलिए जी, मैं उसी डाक्टर को दिखाऊंगी। मैं भी लुटने से वच गई।

उठकर चलती है।

लट्टूवाला : अजी ऐसे डाक्टरों ने तो सत्यानाश कर रखा है। नीम-हकीम खतरा ए जान।

चलता है।

शीला : अजी सुनिए !

तीनों : रहने दीजिए।

पटाक्षेप